चन्दामामा
अक्तूबर १९८१
1 Rs ·75

जीवन और हनु

खेलों की दुनिया में

जीवन और हनु अब प्रतिभा को तो अच्छी तरह जान गये हैं। पर उतना ही जरूरी मानव शरीर भी है। इनके बारे में भी अब उन्हें कुछ जानना चाहिये-वह भी काम व खेल के सम्बन्ध में। खेल की दुनिया मनोरंजक भी है और विविधता से भरपूर भी। क्रिकेट और फुटबाल से तो सभी परिचित हैं। परन्तु क्या आप जानते हैं कि विश्व रिकार्ड बनाने के लिए कुछ लोग हवाई जहाज से भी छलांग लगा देते हैं? मोटर साइकलों और कबूतरों की दौड़ सम्बन्धी प्रतियोगिताएं नियमित रूप से होती ही रहती हैं? कुछ अन्य निराले खेल तथा उनके विश्व रिकार्ड इस प्रकार हैं:-

पाल मेक क्रेडी व ब्रायन एलेन ने 1979 में एक नया खेल ही ईजाद कर दिया: हवाई जहाज मानव शक्ति द्वारा ही उड़ा लेना। 'गोस्सामेर आलबट्रोस' को पेडल मारकर उड़ाते हुए एलेन ने 3 घंटे से भी कम समय में 37 किलो मीटर उड़कर इंग्लिश चैनल पार की। आप देखेंगे वह दिन दूर नहीं है जब कि इस नये रोमांचक खेल के लिए दौड़ें होंगी और रिकार्ड बनाये जायेंगे।

कबूतरों का लम्बी दूरी तक उड़ने का रिकार्ड 1845 में **वेलिंग्टन के प्रथम ड्यूक** के एक कबूतर द्वारा बनाया गया। वह 55 दिन में 7000मील उड़ा था। तेज गति से उड़ने का रिकार्ड 1961 में आयरलैंड में हुई कुन्गरवन दौड़ में स्थापित किया गया: 97.4 मील प्रति घंटा।

इटली के **जी. रिवरोली** ने 1967 में हुई रोलर-स्केटिंग प्रतियोगिता में 10,000 मीटर की दूरी केवल 16 मिनट 42 सैकण्ड में तय करके विश्व रिकार्ड बनाया।

(हवाई) छतरी से कूदने पर कितने समय बाद वह खुलती है-इस प्रतियोगिता (पुरुष) में विश्व रिकार्ड रशिया के **डी. आंद्रेयेव** का है। 1962 में 24,500 मीटर नीचे जाने के बाद उसकी छतरी खुली थी। 1979 में 10-सदस्यीय पुरुष टीम ने इटली में 5.16 सैकण्ड में ही आसमान में 10-पाइन्ट का तारा बना कर 8.8 सैकण्ड का सोवियट रिकार्ड तोड़ दिया।

अमेरिका के **डी. वास्को** ने बोनेविले नामक शहर में 1975 में 487.5 किलो मीटर प्रति घंटे की गति से यमाहा मोटर साइकल चला कर तेज़ गति में विश्व रिकार्ड स्थापित किया। 1979 में हुई रोड रेसिंग विश्व प्रतियोगिता में अमेरिका के ही **केनी रोबर्टस्** विजेता थे।

जीवन बीमा आपके भविष्य को सुरक्षित रखने का सबसे विश्वसनीय तरीका है। इसके बारे में और जानकार हो जाइये।

भारतीय जीवन बीमा निगम

Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 20 (Hindi)

1st Prize: Jayeshwar I Vasu Bombay-67; *2nd Prize*: Kumari Nirjharini, Bilaspur 751 00' *3rd Prize:* Sunil Tukaram Gorghate, Nagpur-15; *Consolation Prizes*: R. Jai Prakash Rao, Berhampur 201 164; Hem Chandra, Achmera-283 101; Surjeet Kour, Karnal; Asha Miyal; Dehradun, Auno Tripathy, Calcutta-700 029.
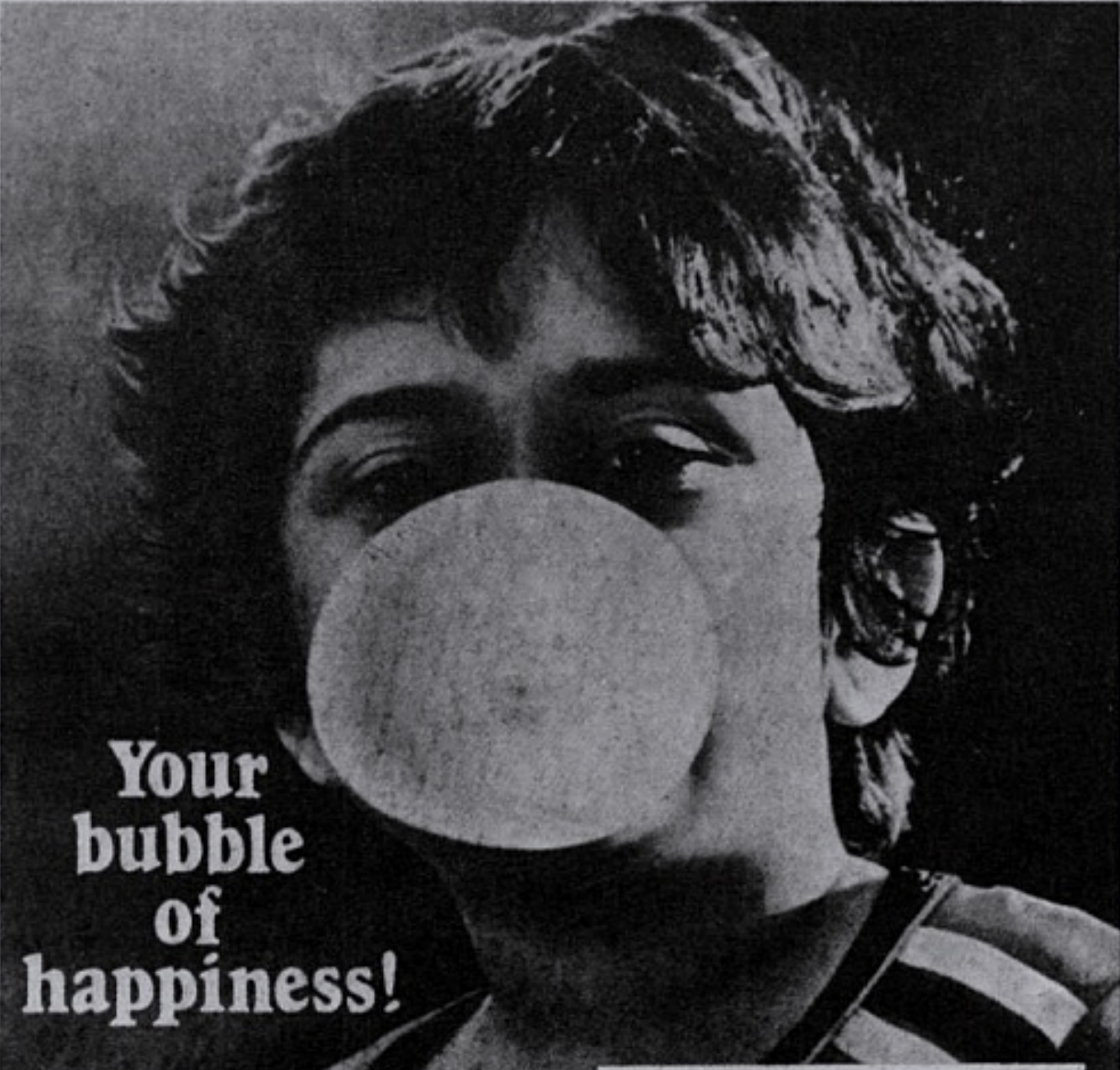
चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

केवल चन्दामामा के पाठकों के लिए

त्योहार का उपहार

रू. १२/- से रू. ३२/- तक की बचत कीजिये

चंदामामा क्लासिक्स और कॉमिक्स के नियमित ग्राहक बन जाइये

हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगाली और कन्नड़ में एक नई पाक्षिक।

	सामान्य क़ीमत	रियायती क़ीमत
१२ महीने (२४ अंक)	रू. ४८	रू. ३६

अलग डाक खर्च कुछ नहीं।

चंदामामा क्लासिक्स और कॉमिक्स – कॉमिक्स की दुनिया में तहलका। एक नई दुनिया में विचरिये, दुनिया भर में मशहूर

वाल्ट डिसनी

की रंगीन रचनाओं और सूझ बूझ भरी कहानियों के साथ।

आर्डर कैसे दिया जाय :

अपना चंदा भेजना बहुत आसान है। नीचे दिया गया कूपन भरिये और ३६ रू. के क्रॉस्ड पोस्टल आर्डर के साथ भेजिये, या नीचे लिखे पते पर ३६ रू. का, आप चाहें तो, मनी आर्डर भी भेज सकते हैं। और मनी आर्डर की रसीद तथा कूपन डाक से भेजिये।

डॉल्टन एजन्सीज़
चंदामामा बिल्डिंग्स,
वडपलनी, मद्रास – ६०० ०२६

यह उपहार सिर्फ़ नवंबर १४, १९८१ तक व भारतीय ग्राहकों के लिए ही है।

श्री / कुमारी ______________________ रकम रू. ____________

पता ______________________

पिन ____________

जन्म तारीख ______________________ हस्ताक्षर ____________

मुझे ____________ अंक से ____________ महीनों के लिये प्रतियां भेजिये

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

"अंध विश्वास" नामक कहानी के द्वारा भली-भांति हमें यह विदित होता है कि साधारण व्यक्तियों में प्रचलित अंध विश्वास समाज के लिए उतने हानिकारक नहीं होते जितने एक राजा के अंध विश्वासी होने पर होते हैं ।

अमर वाणी

बृहस्पतेरपि प्राज्ञो, न विश्वासे प्रजेश्वरः,
य इच्छेदात्मनो वृद्धि, मायुष्यं च सुखानिच ।।

[जो व्यक्ति सिर्फ़ अपने कुशल और सुख की रक्षा पर ज्यादा ध्यान देता है, वह चाहे बृहस्पति जैसे बुद्धिमान भी क्यों न हो, दूसरों की बातों पर विचार किये बिना विश्वास नहीं करना चाहिए ।]

वर्ष : ३४ अक्तूबर १९८१ अंक : २

एक प्रति : १-७५ : : वार्षिक चन्दा : २१-००

सोचा कुछ, हुआ और!

अनंत शास्त्री देर तक दर्वाजे पर दस्तक देता रहा, तब उसकी पत्नी अरुंधती जंभाइयाँ लेते हुए आ पहुँची, दर्वाजा खोल कर चबूतरे पर खड़े हो आसमान की ओर देखते बोली–"आप इतनी रात को बीते क्यों आये?"

उस दिन सवेरे घर से निकलते वक़्त अनंत शास्त्री अपनी औरत को यह कहकर गया था कि वह दूसरे दिन ही लौटेगा।

"मेरा काम जल्दी पूरा हो गया। इसलिए में किराये की गाड़ी में चल पड़ा। आधे रास्ते में गाड़ी कीचड़ में धंस गई। वहाँ से पैदल चलकर आया, इसलिए देरी हो गई।" यों कहते वह खीझकर घर के अन्दर चला आया।

अनंत शास्त्री हाथ-मुँह धो रहा था। तब अरुंधती वहाँ पहुँच कर बोली–"आज शाम को जानकीराम की पत्नी झगड़ा करके चली गई। कह रही थी कि हमारी बिल्ली ने उनके घर का दूध पी लिया है। यह भी कह रही थी कि आपके लौटने के बाद अपने पति से कहकर आपका सर फोड़वा देगी।"

अनंत शास्त्री के मकान के पिछवाड़े की तरफ़ जानकीराम का परिवार रहता था। उन दो परिवारों के बीच इधर कई दिनों से दुश्मनी चली आ रही थी।

"अरी, जानकीराम की डींगों की तुम परवाह क्यों करती हो? पहले तुम मुझे खाना तो परोसो।" अनंत शास्त्री ने समझाया।

अरुंधती चौंक पड़ी। जो रसोई बनी थी, सारी वह सफाचट कर गई थी। घर में तरकारियाँ भी बची न थीं।

यह खबर सुनाकर बोली–"मैंने नहीं सोचा था कि आप आज ही रात को घर

रामप्रसाद वर्मा

लौट आयेंगे, पर अब आप ही बताइये कि क्या किया जाय ?"

ये बातें सुन अनंत शास्त्री झल्ला उठा। वह बड़ी दूर पैदल चलकर आया था, इस वजह से उसे जोर की भूख लगी थी।

"अरी, पाव भर चावल जल्दी बना दो, अचारू के साथ खा लूंगा।" अनंतशास्त्री खीझकर बोला।

अरुंधती संकोच करते बोली–"छोटी झारी में जो अचारू था, वह चुक गया है, बड़ी झारी तो अटारी पर है। उसे उतारना हो तो इस अंधेरे में बिच्छू-सांप काट दे तो क्या होगा? पिछवाड़े में तरकारी है, तोड़ लाइये। इस बीच में चावल बना दूंगी।"

लाचार होकर अनंत शास्त्री पिछवाड़े में गया, वहाँ पर अंधेरा छाया हुआ था। वह अपनी आदत के मुताबिक़ तरकारी की क्यारी में आ पहुँचा। उसके पैर के नीचे कोई मुलायम चीज़ लगी। शास्त्री ने चौंक कर ध्यान से देखा, वह बिल्ली की बच्ची थी।

इधर चार दिन पहले अनंत शास्त्री की बिल्ली ने चार बच्चे दिये थे, उनमें से सफ़ेद रंग की बिल्ली उसके पैरों के नीचे दबकर मर गई है। अनंत शास्त्री ने उसे हिलाकर समझ लिया है कि वह मर गई है।

तब उसका कलेजा कांप उठा। वह सोचने लगा कि बिल्ली को मारने का पाप लगेगा। पाप का प्रायश्चित करने के पीछे उसका दीवाला पिट जाएगा। ऐसी बातों में अरुंधती बड़ी सख़्त रहती है! इसलिए उसने सोचा कि चुपचाप उसे गाड़ देने पर कुछ हद तक तो प्रायश्चित हो जाएगा।

अरुंधती उस वक़्त रसोई घर में थी। इसलिए उसने बिना ज़्यादा आहट किये कुदाल से गड्ढा खोदा, बिल्ली की बच्ची को उसमें दफ़नाकर तरकारी तोड़ करके अनंत शास्त्री चुपचाप घर के भीतर चला गया।

"तरकारी तोड़ने में आप को इतनी देर लगी? मुझसे कहते थे कि मिनटों में रसोई बना देनी है?" यों ताने देते अरुंधती ने तरकारी बनाई।

पर हुआ क्या, रात के वक़्त पिछवाड़े में कोई आहट होते सुनकर जानकीराम की पत्नी पिछवाड़े में चली आई। शास्त्री को क्यारी में गड्ढा खोदते देख वह अचरज में आ गई, जब शास्त्री अपने घर के अन्दर चला गया, तब जानकीराम की पत्नी अपने कमरे में पहुंची और अपने पति को थपथपा कर जगाया।

"इस आधी रात को तुमने मेरी नींद हराम कर दी। ऐसी कौन आफ़त आ पड़ी है?" यों कहते जानकीराम आँखें मलते उठ बैठा।

"उठ जाओ। हमारा घर भरने वाला है! अनंत शास्त्री ने क्यारी में गड्ढा खोद कर सोना या धन गाड़ दिया है। गांव में चोरों का बड़ा दबदबा है न! शास्त्री के सोते ही तुम चुपचाप दीवार फांदकर उस धन को खोद लाओ। इस तरह से हम उनको अच्छा सबक़ सिखलायेंगे।" जानकीराम की पत्नी ने सुझाया।

धन की बात सुनते ही जानकीराम की नींद का नशा उतर गया। अनंत शास्त्री ने जो कुछ गाड़ रखा था, उसे खोदकर ले आने के लिए एक छोटी-सी पेटी के साथ चल पड़ा। दीवार फांदकर उसने गड्ढे के निशान को जल्दी पहचान लिया। वह कुदाल से उस जगह को खोदने जा रहा था, तभी उसके कंठ पर कोई ठंडी चीज़ सी लगी। वह चौंक पड़ा, सर उठाकर देखता क्या है, काले वस्त्रों में भयंकर लगने वाला चोर खड़ा हुआ है!

"मेहनत के साथ गड्ढा खोदकर धन छिपाने के लिए तक़लीफ़ क्यों उठाते हो? वह पेटी मेरे हाथ देकर अपनी मेहनत से बच जाओ!" चोर ने कड़क कर कहा।

चोर को देखने पर जानकीराम के हाथ-पाँव सन्न हो गये, मगर उसका दिमाग

तेजी के साथ हरकत करने लगा। उसने सोचा कि चोर इस घर को मेरा मानता है और यह सोचता है कि मैं अपना धन छिपाने जा रहा हूं! इस मौक़े का लाभ उठाकर चोर के द्वारा अनंत शास्त्री के घर को लुटावाना है।

जानकीराम खाली पेटी खोलकर चोर को दिखाते हुए बोला—"मेरी पत्नी ने इस पेटी के अटने लायक़ गड्ढा खोदने को बताया है। वह अपने सारे गहने लाकर इसमें डाल देगी। तुम दर्वाजा खटखटाकर उसको पुकारो। वे सारे गहने ले जाओ, लेकिन मेरे साथ सख्ती न करो।"

"क्या मेरी आवाज़ सुनकर तुम्हारी औरत दर्वाजा खोलेगी? तुम अपनी औरत को पुकारो। उसके बाद बाहर आने पर गहनों की बात मैं सोच लूंगा।" यों कहते चोर ने जानकीराम की गर्दन थाम ली और उसे शास्त्री के पिछवाड़ें के द्वार तक खींच ले गया।

इस पर जानकीराम के मन में चोर का डर जाता रहा, वह ख़ुशी में आकर जोर से चिल्ला उठा—"अरुंधती, जल्दी यहां पर आ जाओ।"

चोर ने सोचा कि दर्वाजा खुलते ही जानकीराम अपनी पत्नी को कोई इशारा करेगा, इसलिए वह जानकीराम को थोड़ा हटाकर खुद दर्वाजे के समीप खड़ा हो गया। इसके बाद जानकीराम ने एक बार और ऊँची आवाज़ में अरुंधती को पुकारा।

वह पुकार सुनकर अरुंधती तो जागी नहीं, पर शास्त्री जाग उठा। आधी रात को किसी को पुकारते देख उसे बड़ा गुस्सा आया, तभी उसे याद आया कि जानकीराम की पत्नी ने अपने पति के द्वारा उसका सर फोड़वाने की धमकी दे चुकी है।

इस पर शास्त्री दांत पीसते लाठी लेकर चुपचाप किवाड़ के पास पहुँचा, दर्वाजा खोलकर वहां पर खड़े चोर को ही

जानकीराम सोचकर उसके सर पर लाठी जमा दी।

चोर सर चकरा कर नीचे गिर पड़ा।

जानकीराम इस घटना को देख डर गया। उसने सोचा कि गुस्से में आने पर शास्त्री कुछ भी कर सकता है, ऐसे व्यक्ति के साथ दुश्मनी बढ़ाने के बदले दोस्ती कर लेना अच्छा होगा।

यों विचार कर अपनी खुशी ज़ाहिर करते हुए जानकीराम बोला–"शबाश! शास्त्रीजी! डाकू को तुमने एक ही मार से गिरा दिया! तुमको गाँव के मुखिये से ज़रूर बहुत बड़ा इनाम मिल जाएगा।"

इस बार शास्त्री ने जानकीराम की ओर लाठी का निशाना बनाकर धमकी देते हुए गरजकर कहा–"अरे दुष्ट, तुम अपनी चिकनी-चुपड़ी की बातें मुझे मत सुनाओ, बताओ, तुम जिसे डाकू मानते हो, उसके पीछे मेरे पिछवाड़े में क्यों आये हो?"

जानकीराम कांपते हुए स्वर में सारी बातें सुनाकर बोला–"शास्त्रीजी, कृपया यह मत पूछो कि मैंने ऐसा क्यों किया है। इसी को लोग कहते हैं कि अक़्ल चरने गई थी। मुझे माफ़ कर दो। आज से हम दोनों अपनी पुरानी दुश्मनी को भूल जायेंगे।"

इसके बाद जानकीराम के कहे मुताबिक़ एक नामी डाकू को पकड़वाने के एवज में गाँव के मुखिये ने शास्त्री को सौ रुपये का इनाम दिया।

ये सारी बातें अपने पति के मुँह से सुनकर अरुंधती हँसकर बोली–"बिल्ली की वह बच्ची कल शाम को किसी बीमारी से मर गई थी। मैंने सोचा कि सवेरा हो जाने पर नौकर से गड्ढा खुदवा कर उसे गड़वा दूंगी। उसी के द्वारा आप को इनाम मिला और वह आपका दुश्मन दोस्त हो गया है, क्या मरी बिल्ली को गाड़ने का पुण्य कभी व्यर्थ हो जाता है?"

[१७]

[समरसेन को पता चल गया कि शाक्तेय का अद्भुत शक्तियोंवाला त्रिशूल शिथिल नगर के हाथियोंवाले बगीचे में है। व्याघ्रदत्त ने समरसेन पर हमला करके उसे बन्दी बनाया। उसी वक्त व्याघ्रदत्त को उसके अनुचरों के द्वारा मालूम हुआ कि शिवदत्त वहाँ पर आ रहा है। इस पर वह बन्दी समरसेन के साथ भागने लगा। बाद–]

यह खबर मिलते ही समरसेन उत्साह से भर उठा कि शिवदत्त अपने अनुचरों के साथ शिथिल नगर में पहुँच गया है। पर वह मन ही मन सोचने लगा कि अगर शिवदत्त थोड़ी देर पहले वहाँ पर पहुँच गया होता तो क्या ही अच्छा होता! क्योंकि ऐसी हालत में समरसेन व्याघ्रदत्त का बन्दी न बनता; साथ ही व्याघ्रदत्त का संहार करके शाक्तेय के त्रिशूल को पा लेता।

समरसेन यह समझ न पाया कि व्याघ्रदत्त उसके साथ कैसा व्यवहार करने वाला है। उसका वध करने में व्याघ्रदत्त को कोई रोकने वाला भी नहीं है, इसलिए समरसेन सोचने लगा कि इस खतरे के वक़्त चतुर्नेत्र वहाँ पर पहुँच जाय तो क्या ही अच्छा होगा।

अब व्याघ्रदत्त के मन में यह डर पैदा हुआ कि वह ख़तरे में पहुँच गया है।

क्या शिवदत्त को शाक्तेय के त्रिशूल का कुछ पता भी है? यह शंका भी उसके मन में होने लगी। साथ ही उसे यह भी शंका होने लगी कि समरसेन चतुर्नेत्र को अपना मित्र जो बता रहा है, इसमें कहाँ तक सचाई है?

चाहे जो हो, फिलहाल जल्दीबाजी में आकर समरसेन का वध करना खतरे से खाली [illegible] है। यही निश्चय व्याघ्रदत्त ने किया। हो सके तो समरसेन के साथ दोस्ती का अभिनय करके शक्तिशाली शिवदत्त का पहले संहार करना होगा। यही तरीक़ा व्याघ्रदत्त को सबसे उत्तम मालूम हुआ।

व्याघ्रदत्त के साथ सभी लोग अब ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी रास्ते पर दौड़ रहे थे। व्याघ्रदत्त के कुछ सिपाही शिवदत्त के अनुचरों के साथ अभी तक लड़ रहे थे। इसकी सूचना के रूप में उसके सिपाहियों की चिल्लाहटें सुनाई दे रही थीं। इससे व्याघ्रदत्त के मन में थोड़ी सी हिम्मत बंध गई।

इस पर व्याघ्रदत्त बोला–"समरसेन, यहाँ पर हम थोड़ी देर आराम कर सकते हैं। दुश्मन से हम बहुत दूर चले आये हैं। अब डरने की कोई बात नहीं है।"

समरसेन को ये बातें आश्चर्यजनक मालूम हुईं। क्योंकि व्याघ्रदत्त के बन्दी बने उसके साथ मित्र के रूप में तथा उसके मित्र शिवदत्त को शत्रु के रूप में मानकर बातें कर रहा है।

ये सारी बातें सोचकर समरसेन ने कहा–"हे व्याघ्रदत्त, शिवदत्त प्रारंभ से ही मेरे दोस्त हैं। उनसे तुमको डरना होगा, पर मुझे नहीं!"

दूर तक भागने से व्याघ्रदत्त थक गया था, इसलिए वह एक पेड़ से सटकर बैठते हुए समरसेन की बातें सुन अवाक् रह गया। इसलिए तत्काल इसका जवाब देने में वह संकोच करने लगा। क्योंकि उसके मन में यह भावना दृढ़ हो गई कि किसी

भी तरह से सही, समरसेन को अपने पक्ष में कर लेना सभी प्रकार से उसके लिए हितकर होगा।

यों विचार कर व्याघ्रदत्त ने कहा– "समरसेन, लगता है कि तुम शिवदत्त के बारे में सही जानकारी नहीं रखते। जब तक हम दोनों दुश्मन बने रहेंगे, तब तक हम दोनों को कष्ट उठाना पड़ेगा। लो, मैं अभी तुम्हें बंधनों से मुक्त कर देता हूँ। इसके बाद हम मित्र बनकर सारी बातों की चर्चा कर सकते हैं।"

इसके बाद व्याघ्रदत्त का आदेश पाकर दो सिपाहियों ने समरसेन के हाथों पर बंधे रस्से खोल दिये। समरसेन ने भी अपने मन में यह निश्चय कर लिया कि इस संकट की हालत में व्याघ्रदत्त को मीठी बातों से किसी प्रकार संतुष्ट करना उसके लिए लाभदायक होगा।

"दोस्त, शाक्तेय के अपूर्व शक्तियोंवाले त्रिशूल का वृत्तांत केवल हम दोनों जानते हैं कि वह त्रिशूल कहाँ पर है और उसके धारण करने वाले किस तरह सुख-वैभव भोग सकते हैं! पर बताओ, उसके द्वारा तत्काल तुम इस भयंकर द्वीप में किस प्रकार का लाभ उठा सकते हो?" समरसेन ने पूछा।

यह सवाल सुनते ही व्याघ्रदत्त का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसके मन में यह शक हुआ कि शायद समरसेन धन-राशियों से पूर्ण नाव का समाचार जानते न हो।

पर उसी वक़्त उसे याद आया कि समरसेन उस द्वीप में किस उद्देश्य को लेकर आया है। नाव की उस संपत्ति को पाने के लिए ही वह इतनी दूर चला आया है। इसलिए उसने सोचा कि नाव का वृत्तांत उसे सुनाने पर कोई नुक़सान होने वाला नहीं है।

यों विचार करके समरसेन से व्याघ्रदत्त ने कहा—"समरसेन, हम दोनों समुद्र में धन राशियों से भरी नाव के बारे में अच्छी तरह से जानते हैं। इसमें एक दूसरे को धोखा देने का सवाल ही नहीं उठता। पर इस वक़्त में तुम्हें एक समाचार सुनाना चाहता हूं! तुम अच्छी तरह से सोच-समझकर इसका जवाब दो! हम उन धन की राशियों को आधा-आधा बांट लेंगे। इसमें तुम्हें कोई एतराज नहीं है न?"

"हमारी इच्छा और अनिच्छा की बात फिर सोच लेंगे, पहले उन मांत्रिकों की बात तो बताओ।" समरसेस ने हँसते हुए कहा।

"शाक्तेय का त्रिशूल हस्तगत करने पर इस दुनिया की कोई भी ताक़त हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकती।" व्याघ्रदत्त ने ऊँचे स्वर में कहा।

यह जवाब सुनकर समरसेन खिल-खिलाकर हँस पड़ा। इसका कारण व्याघ्रदत्त समझ न पाया, इसलिए वह अचरज में आकर समरसेन की ओर शंका भरी दृष्टि से देखने लगा।

"क्या तुमने यह समझने की कोशिश न की कि शाक्तेय का त्रिशूल इसी वक़्त शिवदत्त के हाथों में पड़ने की संभावना है?" समरसेन ने कहा।

"समरसेन, शाक्तेय के त्रिशूल के उस गुप्त प्रदेश की जानकारी शिवदत्त नहीं रखता है। तिस पर वह मेरे सारे सिपाहियों का संहार किये बिना उसे पा नहीं सकता। त्रिशूल जहाँ पर छिपाया गया है, उसका नक़्शा मेरे पास है। सिर्फ़ 'हाथी वन का विष वृक्ष' की जानकारी

के आधार पर नक़्शे में दिखाये गये चिह्नों की मदद के बिना कोई भी उसे खोजकर नहीं ले सकता।" व्याघ्रदत्त ने दर्प के साथ कहा।

व्याघ्रदत्त की बात पूरी भी न हो पाई थी कि एकाक्षी मांत्रिक के भेदिये कपाल का कंठ स्वर उस प्रदेश में गूंज उठा। यह आवाज़ सुनते ही समरसेन उठ खड़ा हुआ। व्याघ्रपत्त और उसके अनुचर भय कंपित हो चारों तरफ़ ताकने लगे।

"यह कंठ स्वर चतुर्नेत्र के भेदिये कपाल का है! तुम लोग भागकर दूर की किसी गुफा में छिप जाओ, इसी में तुम लोगों की खैर है।" समरसेन ने सलाह दी।

व्याघ्रदत्त ने समरसेन की ओर शंका भरी नज़र डालकर पूछा-"तुमने तो चतुर्नेत्र को अपना मित्र बताया था न? ऐसी हालत में हमें उससे डरने की क्या ज़रूरत है?"

समरसेन ने सोचा कि अब विलंब करने पर उसे ख़तरे में फंसना पड़ेगा। कपाल एकाक्षी मांत्रिक का भेदिया है। समरसेन यह सोचकर व्याघ्रदत्त से झूठ बोला था कि मांत्रिक चतुर्नेत्र की समता कर सकने वाला एक और दुश्मन एकाक्षी मांत्रिक है, यह समाचार व्याघ्रदत्त को मालूम हो जाना खतरे से खाली नहीं है।

"चतुर्नेत्र की दृष्टि में पड़ना तुम्हारे लिए हितकर नहीं है! बाद में मैं तुम्हें उसका परिचय कराऊँगा। यह बात मैं तुम्हारी भलाई के लिए कहता हूँ। तुरंत किसी गुफा में तुम लोगों का छिप जाना ज़्यादा उचित होगा।" समरसेन ने घबराहट का अभिनय करते कहा।

समरसेन व्याघ्रदत्त को यों समझा ही रहा था, तभी एकाक्षी मांत्रिक का भयंकर कंठ गूंज उठा-"हे कपाल! हे काल भुजंग!" उस ध्वनि को सुन चकित हो व्याघ्रदत्त और उसके अनुचर वहां से भागने लगे। यही अच्छा मौक़ा समझकर समरसेन दूसरी दिशा की ओर तेजी के साथ भागने लगा।

थोड़ी दूर तक भागने के बाद व्याघ्रदत्त ने पीछे मुड़कर देखा। समरसेन को दूसरी दिशा में भागते देख उसके मन में शंका पैदा हो गई। अपने मित्र मानने वाले चतुर्नेत्र से डरकर समरसेन को भागने की क्या ज़रूरत है? व्याघ्रदत्त ने सोचा कि दाल में कुछ काला है।

व्याघ्रदत्त यों सोच ही रहा था, तभी एकाक्षी मांत्रिक वहां पर आ धमका। उसकी दृष्टि व्याघ्रदत्त पर पड़ी। वह क्रोध के मारे दांत पीसते हुए गरज उठा—"हे कपाल! हे काल भुजंग! तुम लोग चतुर्नेत्र के अनुचरों को घेर लो! मैं इन लोगों को अपनी तलवार का शिकार बनाने जा रहा हूं।"

व्याघ्रदत्त समझ गया कि यह मांत्रिक समरसेन का मित्र चतुर्नेत्र नहीं है। उसे दगा देकर समरसेन भाग गया है। अब उसका कर्तव्य क्या है? किसी तरह इस मांत्रिक को उसे समझाना होगा कि वह चतुर्नेत्र का अनुचर नहीं है, बल्कि उसके शत्रु-पक्ष का है!

एकाक्षी मांत्रिक का आदेश पाकर उसके भेदिये कपाल और काल भुजंग ने व्याघ्रदत्त तथा उसके सिपाहियों को घेर लिया। काल भुजंग अपने दाढ़ फैलाकर फुत्कार करते उनके चारों तरफ़ चक्कर

काटने लगा। कपाल उनके चारो तरफ़ उड़ते इस तरह विकृत रूप से चिल्लाने लगा जिससे उनके कलेजे कांप उठे।

एकाक्षी मांत्रिक अट्टहास करते हुए उनके समीप पहुंचा। तब अचानक उसका अट्टहास बंद हुआ। उसके विचार के अनुसार उसके हाथ में बंदी बने हुए लोग समरसेन और उसके सैनिक नहीं हैं। इस पर एकाक्षी मांत्रिक ने उनकी ओर आश्चर्य पूर्वक देखते हुए पूछा—"तुम लोग कौन हो? क्या कुंभाण्ड के अनुचर हो?"

व्याघ्रदत्त आपादमस्तक कांप उठा। क्योंकि उसे खुद मालूम न था कि कुंभाण्ड

कौन है? उसने कहा–"मेरा नाम व्याघ्रदत्त है। मैं इस व्याघ्रमण्डल का राजा हूँ। मैं कुंभाण्ड का नाम तक नहीं जानता हूँ।"

"तो इसका मतलब है कि तुम मृत्यु की घाटी के उस पार से आये व्यक्ति नहीं हो?" एकाक्षी मांत्रिक ने पूछा।

"आप जिस मृत्यु की घाटी की बात बताते हैं, मुझे उसका पता तक नहीं है कि वह कहाँ पर है? शायद हम लोग उस घाटी को दूसरे नाम से जानते हों!" व्याघ्रदत्त ने जवाब दिया।

"तब तो क्या तुम समरसेन नामक व्यक्ति को जानते हो?" एकाक्षी ने फिर पूछा।

एकाक्षी के मुँह से यह सवाल सुनने पर सारी हालत व्याघ्रदत्त की समझ में आ गई। उसने भांप लिया कि एकाक्षी मांत्रिक समरसेन का प्रबल शत्रु है। अब व्याघ्रदत्त को लगा कि समरसेन के साथ बदला लेने का यही एक अच्छा मौक़ा है।

वह बोला–"मांत्रिक महाशय, वह समरसेन दो-तीन घड़ियों से पहले मेरे हाथ से बचकर भाग गया है। वह मेरा जानी दुश्मन है। उसको मैंने इसके पहले बन्दी बनाया था।" व्याघ्रदत्त ने कहा।

व्याघ्रदत्त के मुँह से यह समाचार सुनने पर सारा हाल एकाक्षी मांत्रिक की समझ में आ गया। उसने सोचा कि समरसेन को बन्दी बनाने में व्याघ्रदत्त मदद दे सकता है! पर उसने सोचा कि समरसेन और व्याघ्रदत्त के बीच दुश्मनी हो जाने के कारण जान लेना जरूरी है! यों विचार करके उसने पूछा–"तुम दोनों के बीच दुश्मनी क्यों पैदा हो गई है?"

"आप तो सर्वज्ञ हैं! मुझे विशेष रूप से आप को ज्यादा बताने की ज़रूरत नहीं है।" इन शब्दों के साथ व्याघ्रदत्त ने अपने दोनों हाथ जोड़कर एकाक्षी मांत्रिक को प्रणाम किया।

–(अगले अंक में समाप्त)

अक़्लमंद कौन है?

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल हमेशा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, मैं नहीं जानता कि आप किसके वास्ते श्रम उठा रहे हैं। यह बात कोई आश्चर्यजनक नहीं है कि धन कमाने के मामले में मनुष्यों के बीच बड़ी स्पर्धा होती है और इस कारण वे लोग आपस में दुश्मनी मोल लेते हैं। लेकिन मैं आपको दो व्यक्तियों की एक ऐसी विचित्र कहानी सुनाता हूँ, जो अपने को एक दूसरे से ज्यादा अक़्लमंद मानकर दुश्मन बन बैठे! श्रम को भुलाने के लिए सुनिये!"

बेताल यों सुनाने लगा : कोसल देश का मातंग नगर एक जमाने में व्यापार का मशहूर केन्द्र था। उस नगर में सुधाकर

सारंग के साथ परिचय बढ़ाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। हर साल अरब देशों के कुछ सौदागर आकर सुधाकर के यहाँ से भारी पैमाने पर सुगंध द्रव्य खरीद कर ले जाया करते थे।

इस व्यापार के द्वारा सुधाकर को दो प्रकार का फ़ायदा होता था। एक तो एक ही साथ ज़्यादा माल बिक जाता था और दूसरा ज़्यादा फ़ायदा होता था।

पर इस साल सारंग उस भारी सौदे से फ़ायदा उठाने की सोचने लगा। उसका विचार था कि सुधाकर से कम दर पर भारी पैमाने पर अपना माल बेचे। उसे खबर मिली कि थोड़े ही दिनों में अरब सौदागर उस नगर में आनेवाले हैं।

नामक एक प्रमुख व्यापारी रहा करता था। लोगों का यह विश्वास था कि अक़्लमंदी में सुधाकर की बराबरी करने वाला कोई दूसरा आदमी नहीं है। नगर भर में अकेला सुधाकर ही चंदन, नागकेसर, जायफल, लौंग, इलायची आदि सुगंध द्रव्यों का व्यापार किया करता था।

कई साल गुजर गये। एक बार सारंग नामक एक आदमी उस नगर में आया और सुगंध द्रव्यों का व्यापार शुरू करके थोड़े ही दिनों में बहुत सारा धन कमाया। इस कारण सुधाकर के व्यापार में थोड़ी मंदी आ गई। लेकिन सुधाकर ने कभी

एक दिन एक बूढ़े आदमी ने सारंग से मुलाक़ात करके उसे समझाया—"मैं तुम्हारी भलाई के लिए कहता हूँ कि तुम सुधाकर के साथ होड़ लगाकर अपने माल का दर कम न करो। क्योंकि इस वजह से न केवल तुम्हारा और सुधाकर का ही नुक़सान होगा, बल्कि हमारे देश का भी भारी नुक़सान होगा। क्योंकि सुधाकर भला आदमी है। तुम दोनों आपस में विचार-विमर्श करके अरब सौदागरों के हाथ अपना आधा-आधा माल बेच लो! इसी में तुम दोनों की भलाई है।"

सारंग ने कहा—"क्या तुमको सुधाकर ने मेरे साथ समझौता करने के लिए भेजा है? लगता है कि उन्हें अपनी अक़्लमंदी पर से विश्वास उठ गया है और मेरी अक़्लमंदी से डरता है!"

यह जवाब सुनकर बूढ़ा शांत स्वर में बोला—"पगले, अक़्लमंदी में सुधाकर की बराबरी कर सकनेवाला कोई नहीं है। अगर तुम्हारी वजह से अरबी सौदागरों का सौदा सुधाकर के हाथ न लगा, तब भी लोग तुम्हारी अक़्लमन्दी की तारीफ़ नहीं कर सकते! जब तक सुधाकर तुम्हारी अक़्लमंदी की तारीफ़ न करेगा, तब तक इस नगर का कोई भी आदमी तुम्हारी अक़्लमंदी को स्वीकार न करेगा।"

सारंग जानता है कि उस नगर में सुधाकर का नाम कैसे मशहूर है! लेकिन सारंग का यह दृढ़ विश्वास था कि वह सबसे ज्यादा अक़्लमंद है। दर असल सुधाकर से बढ़कर अपने को अक़्लमंद साबित करने के वास्ते ही उसने सुगंध द्रव्यों का व्यापार शुरू किया था।

थोड़ी देर सोचकर सारंग ने पूछा—"अच्छी बात है, कोई ऐसा उपाय बताओ कि मेरे किस काम से सुधाकर मुझको अपने से ज्यादा अक़्लमंद मान सकता है?"

"चाहे सुधाकर बड़े ही अक़्लमंद क्यों न हों, मगर कुछ ऐसे भी काम हैं जो सुधाकर नहीं कर पायेंगे! उन कामों के करने पर वे तुमको ज्यादा अक़्लमंद मान

लेंगे। इसलिए तुम उनसे एक बार मिल क्यों नहीं लेते?" बूढ़े ने सुझाव दिया।

सारंग ने सुधाकर से पूछा—"मेरे मन में यह जानने की जिज्ञासा है कि अक़्लमंदी में आप बड़े हैं या मैं बड़ा हूँ। कृपया यह बताइये कि ऐसा कौन काम है जो आप नहीं कर सकते। क्योंकि मैं वह काम करना चाहता हूँ।"

सुधाकर ने कहा—"ऐसे बहुत से काम हैं जो मैं नहीं कर सकता और आप कर सकते हैं। मगर एक काम ऐसा भी है जिसे हम दोनों नहीं कर सकते। वह काम यह है कि स्त्रवंती नगर के मोती गुप्त के यहाँ से मरकतों का हार पाने का।"

"उस हार को पाने का मतलब क्या है? खरीद कर लाना है या चोरी करके?" सारंग ने पूछा।

"चाहे जैसे भी लाओ, मुझे कोई आपत्ति नहीं है।" सुधाकर ने कहा।

इस पर सारंग मरकतों का वह हार लाने स्त्रवंती नगर में पहुँचा। वहाँ के कई प्रमुख व्यापारियों से सारंग ने मोती गुप्त का पता पूछा, पर कोई बता न सका। आख़िर एक व्यापारी को जब मालूम हुआ कि सारंग सुधाकर के सुझाव पर चला आया है, उसने बताया—"मोती गुप्त नामक एक आदमी शिवाले के बाजू के मकान में रहता है और वह सुधाकर का दूर का रिश्तेदार भी लगता है।"

सारंग मोती गुप्त के घर पहुँचकर बड़ा निराश हुआ, क्योंकि उस घर में दरिद्र देवी का निवास था। ऐसे घर में उसे मरकतों की माला कैसे मिल सकती है?

"वैसे मेरे सभी रिश्तेदार धनी हैं, मगर मैं विरागी हूँ। मैं मधुकरी करके पेट भर लेता हूँ।" मोती गुप्त ने जवाब दिया।

इस पर सारंग ने मोती गुप्त से मरकतों की माला की बात उठाई। मोती गुप्त ने कहा—"इस घर से तुम जो भी चीज़ उठा कर ले जाना चाहते हो, ले जा सकते हो। मुझे तो कोई एतराज नहीं है।"

इसके बाद सारंग ने निश्चय कर लिया कि मोती गुप्त के यहाँ मरकतों की माला नहीं है; आखिर वह खीझ उठा, दो दिन की यात्रा के बाद मातंग नगर को लौट आया। उसने सीधे सुधाकर के घर पहुँच कर कहा– "आपने तो मुझे झूट बताया है। मोतीगुप्त एकदम दरिद्र है। उसके यहाँ मरकतों की माला क्या, रुद्राक्ष माला तक नहीं है।"

"मैंने झूठ नहीं कहा। मैंने सिर्फ़ यही कहा था कि मोती गुप्त के यहाँ से मरकतों का हार लेते आओ, पर मैंने यह नहीं बताया कि मोती गुप्त के यहाँ मरकतों का हार है।" सुधाकर ने समझाया।

"क्या आप यह बात नहीं जानते कि जो चीज़ किसी के यहाँ नहीं है, उस चीज़ को लाना बड़े से बड़े अक़्लमंद आदमी के लिए भी कैसे मुमक़िन है?" सारंग ने पूछा।

"हाँ, मैं यह बात जानता हूँ, लेकिन आपके मन में यह कौतूहल देख मैंने यह बात कही थी कि जो काम मेरे लिए मुमक़िन नहीं है, वह काम आप करे।" सुधाकर ने समझाया।

"आप ने अपने चमत्कार के द्वारा मेरे मूल्यवान समय को नाहक़ बरबाद किया है।" उत्तेजित होकर सारंग ने कहा।

"हाँ, बात सच है, मगर उसे नाहक़ बरबाद किया है, यह बात मत कहियेगा। क्योंकि जब आप इस नगर में न थे, तब अरब के सौदागरों के साथ मेरा सौदा तै हो गया है।" सुधाकर ने कहा।

इस पर सारंग निराश हो बोला– "आपकी अक़्लमंदी तारीफ़ के लायक़ है। मैं आपके हाथों में बुरी तरह से हार गया।"

"अक़्लमंदी की बात चाहे जैसी भी क्यों न हो, आप चाहे तो मैं जो काम नहीं कर सकता हूँ, सो आप अभी कर सकते हैं!" सुधाकर ने जवाब दिया।

"क्या है, वह काम?" सारंग ने पूछा।

"मेरी बेटी के साथ शादी करने का!" सुधाकर ने झट बताया।

ये बातें सुन सारंग आश्चर्य में आ गया।

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर कहा–"राजन, सुधाकर के कहे मुताबिक़ सारंग सचमुच उससे ज़्यादा अक़्लमंद है तो मरकत की माला के बहाने सुधाकर ने जो जाल बिछाया, उसमें सारंग कैसे फँस गया? क्या ऐसे व्यक्ति को अपने दामाद बनाना मूर्खता की बात न होगी? इस संदेह का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– इस बात में कोई संदेह नहीं है कि सुधाकर ने सारंग को अपने दामाद बनाने में बड़ा ही विवेक का परिचय दिया है। सुधाकर ने समझ लिया था कि सारंग अक़्लमंदी में उसकी बराबरी कर सकता है, इसीलिए उसने मरकत की माला के बहाने सारंग को नगर छोड़कर जाने का उपाय किया। सुधाकर का यह विश्वास था कि ऐसा अक़्लमंद व्यक्ति उसका दामाद बन जाएगा तो उसके व्यापार को और दक्षता के साथ उसके अनंतर भी चला सकता है और उस व्यापार को अपने परिवार वालों के लिए क़ायम रख सकता है। अब रही, सारंग की एक ख़ास कमजोरी की बात! चाहे कोई भी अपनी अक़्लमंदी को अपनी ज़िंदगी के निर्बाह के लिए काम में लावे तो तब तक नुक़सान की कोई बात न रहेगी। लेकिन जब दूसरे लोगों से अपने को अधिक अक़्लमंद कहलाने के घमण्ड में आ जाता है, तब उसकी अक़्लमंदी नष्ट हो जाती है और वह गलत रास्ते की ओर क़दम बढ़ाता है। अक़्लमंद आदमी को अपनी अक़्लमंदी का प्रयोग अपने कार्य को साधने के पीछे लगाना चाहिए, मगर दूसरों पर अपनी प्रभुता जमाने के लिए नहीं। सारंग ने यही भूल की। इसीलिए वह सुधाकर के हाथों में बुरी तरह से हार गया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

अंधविश्वास

युवक राजा विक्रमसिंह ने अपने सामंत वीरकेतु की पुत्री गीतांजली के सौंदर्य पर मुग्ध हो उसके साथ विवाह कर लिया।

एक दिन विक्रमसिंह के साले सुकेतु ने उन्हें सात क़ीमती रत्न भेंट किये। राजा ने सोचा कि सुकेतु ने उनकी हानि करने के ख़्याल से ही सात रत्न भेंट किये हैं, यों विचार कर सुकेतु को कारागार में भिजवा दिया। क्योंकि राजा विक्रमसिंह के मन में कुछ अंध विश्वास थे। वे सात की संख्या के नाम से ही डरते थे। क्योंकि जब वे सात साल के थे, तब पानी में डूबते-डूबते बच गये थे। एक बार वे सात प्रमुख व्यक्तियों को साथ लेकर शिकार खेलने गये, तब अचानक उन पर एक बाघ हमला कर बैठा, उसके साथ भयंकर लड़ाई करते वक़्त उन लोगों ने आकर राजा को बचाया।

रानी गीतांजली अपने भाई को कारागार में भिजवानें की ख़बर सुनकर बड़ी दुखी हुई। रानी के पिता का नाम वीरकेतु था। वे अपने दामाद के दिल को दुखाये बिना अपने पुत्र को कारागार से छुड़ाने का उपाय सोचने लगे।

एक हफ़्ते बाद राजा विक्रमसिंह के दरबार में एक योगी आये। उन्होंने राजा के कुशल-क्षेम जानकर बताया– "महाराज, हर आदमी के मन में कामनाएँ ज़्यादा होती हैं। सात दिनों में सब लोग मरनेवाले हैं और सात दिनों में सब लोग पैदा भी होते हैं।"

ये बातें सुन विक्रमसिंह अचरज में आकर बोले–"आपकी ये बातें मेरी समझ में नहीं आ रही हैं कि सब लोगों का सात दिनों में मर जाना और फिर से सात दिनों के अंदर पैदा हो जाना कैसे?"

रमेश गुप्त

योगी ने मुस्कुरा कर जवाब दिया–"महाराज, एक हफ़्ते के सात ही दिन तो होते हैं! मनुष्य की मृत्यु इन्हीं सात दिनों के अंदर किसी दिन होती है। इसी तरह मनुष्य का जन्म भी इतवार और शनिवार के बीच में ही होता है। इसीलिए सात की संख्या के लिए यह महत्व प्राप्त है!"

"क्या कहा? सात की संख्या को महत्व प्राप्त है? सात की संख्या बड़ी बुरी होती है।" इन शब्दों के साथ राजा ने योगी को अपने अनुभव सुनाये।

सारी बातें सुनकर योगी ने समझाया–"राजन, सात की संख्या श्रेष्ठ है, इसीलिए आप अपने सात साल की उम्र में पानी में डूबकर मरते बच गये। इसी तरह सात आदमियों के साथ शिकार खेलने जाकर बाघ के मुँह में जाते बच गये।"

योगी बोले–"हमारे पुराणों ने सात ऋषियों को महान बताया है, सूर्य के रथ में सात घोड़े जुते हैं, संगीत के स्वर सात हैं। इसी प्रकार सात जन्मों का संबंध बताया जाता है। विवाह के समय वर-वधुओं के द्वारा सात क़दम चलाते हैं, जिसको हम सप्तपदी कहते हैं। अब आप सात की संख्या के महत्व को समझ गये?"

राजा यह समझ न पाये कि उनके मन में संख्याओं के प्रति जो अंध विश्वास है, उसे दूर करने के लिए ही योगी आये हैं। इस कारण वे इस बार सात की संख्या को अत्यंत पवित्र मानकर एक और प्रकार के अंध विश्वास में पड़ गये, उन्होंने अपने साले को कारागार से मुक्त किया और अपनी करनी के लिए उससे माफ़ी मांग ली।

दर असल योगी वेषधारी कोई और न था, राजा वीरकेतु का दरबारी पंडित नारायण भट्ट था। उसने अपने राजा को सारा समाचार सुनाकर कहा–"महाराज, हमारे युवराजा कारागार से मुक्त कर दिये गये हैं, लेकिन आपके दामाद सात की संख्या को परम पवित्र मानने वाले अंध विश्वास में पड़ गये हैं, पर हम लोग तो फिलहाल खतरे से बच गये हैं।"

आत्म-सम्मान

सेठ हुकुमचन्द के घर में चोरी हुई। पर चोरी की गई सारी चीज़ों की गठरी चहार दीवार के अन्दर पड़ी हुई थी। उस गली के सभी निवासी इकट्ठे होकर चोरी के बारे में अपने-अपने विचार प्रकट करने लगे। "सारी चीज़ों की गठरी बांधकर चोर भागता होगा, तब किसीके आने की आहट पाकर वह कमबख़्त कायर चोर सारा माल वहीं पर छोड़ गया होगा।" पड़ोसी रामेश्वर लाल ने व्याख्या की।

"नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता। लोभ में पड़कर चोर ने सारी चीज़ों की गठरी बांध दी होगी, पर उस गठरी को उठाकर भाग नहीं पाया होगा, इसलिए वह कमज़ोर चोर वहीं पर गठरी छोड़ गया होगा!" सामने वाले मकान मालिक ने अपनी राय बता दी।

"वह चोर हमारी गली का निवासी होगा। उसने सोचा होगा कि पड़ोसी मकान वालों की आँख बचाकर इतना सारा माल छिपाना मुश्किल है, इसलिए वह कमबख़्त आख़िरी क्षण में वहीं पर छोड़ गया होगा।" पड़ोसी वीरभद्र ने मज़ाक़ उड़ाया।

तब तक ये सारी बातें सुनने वाले पिछले मकान का माधव रोष में आ गया, बोला– "वह चोर कोई कायर न होगा! सारी चीज़ों की गठरी बांधकर दीवार फांद करके भागना चाहा होगा, लेकिन अचानक उसके पैर फिसल जाने से वह गठरी उस मकान के अहाते में ही गिर गई, इस तरह मैं बचकर भाग गया।" फिर क्या था, आख़िर चोर का पता लग गया।

बहन की शादी

गुरुबचन सिंह एक किसान था। जायदाद के नाम पर उसके यहाँ सिर्फ़ दो एकड़ जमीन थी। उसके दो बेटे और एक बेटी थी। बड़े बेटे की शादी के थोड़े ही दिन बाद गुरुबचन सिंह बीमार पड़ा और गोलोकवासी हुआ।

गुरुबचन सिंह ने मरते वक़्त अपने बेटों को बुलाकर समझाया—"बेटे, मैं अपनी ज़िंदगी भर मेहनत करके ज़्यादा जमीन-जायदाद कमा न पाया। मेरी आखिरी इच्छा यह कि तुम दोनों कोई अच्छा रिश्ता देख अपनी बहन की शादी करो।"

अपने बाप के मरने के बाद बड़े बेटे ने दो-चार रिश्ते देखे, मगर छोटे बेटे ने उन रिश्तों को न माना। तब बड़े ने समझाया—"मेरे भाई, तुम अगर ऐसा हठ करोगे तो हम अपनी बहन की शादी नहीं कर पायेंगे।"

"भैया, चाहे हमें जैसी ही तक़लीफ़ क्यों न उठानी पड़े, कोई अच्छा रिश्ता देखकर ही बहन की शादी करनी है। जल्दबाजी में आकर उसकी ज़िंदगी बरबाद करना मैं नहीं चाहता, क्या तुम्हें पिताजी की अंतिम इच्छा याद नहीं है?" छोटे भाई ने कहा।

"तुम्हारा कहना तो ठीक है! मगर तुम जो रिश्ते सुझाते हो, उन्हें ठीक करना है तो हमें दहेज़ के नाम पर काफ़ी खर्च करना होगा। इतना सारा धन हम कहाँ से ला सकते हैं?" बड़े भाई ने कहा।

"हमारे पास जो दो एकड़ जमीन है, उसे बेचकर ही सही हमें बहन के लिए अच्छा रिश्ता क़ायम करना होगा।" छोटे ने हठ किया।

ओट में रहकर दोनों भाइयों की बातचीत बड़े बेटे की पत्नी ने सुन ली।

सरोजा अग्रवाल

उसने अपने पति से कहा–"तुम्हारे छोटे भाई का रवैया देखने पर ऐसा लगता है कि आखिर हमें राह का भिखारी बनना पड़ेगा। कल की चिंता किये बिना वह जोश में आकर कुछ कह रहा है! अगर उसे अपनी बहन से ऐसा ज्यादा प्यार है तो उससे कह दो कि वह अपने हिस्से की एक एकड़ जमीन बेचकर अपनी बहन की शादी करे।"

इस पर बड़ा बेटा सोच में पड़ गया। बड़े की पत्नी ने साफ़ कह दिया–"हम लोग यह मामला जितनी जल्दी तै करे, उतना ही अच्छा होगा।"

इसके बाद दो-चार दिन बीत गये, लेकिन बड़ा बेटा किसी निर्णय पर पहुँच न पाया। इस बीच उसे अपने ससुराल से जल्दी आ जाने का बुलावा आया।

बड़ा बेटा अपनी पत्नी को लेकर ससुराल पहुँचा। घर पहुँचते ही बड़े बेटे की पत्नी ने अपनी माँ से पूछा–"माँ, जल्दी आ जाने की तुमने खबर भेजी, क्या कोई खास बात है?

"आज तुम्हारी बहन का रिश्ता क़ायम करने के लिए पड़ोसी गाँववाले आ रहे हैं, वर तुम्हें भी पसंद आना चाहिए न! इसलिए तुम दोनों को बुला भेजा।" माँ ने जवाब दिया।

वर ने वधू को पसंद किया। वह खुद सुंदर और सुशिक्षित था। तिस पर वह बड़ी भारी संपत्ति का वारिस है। इसलिए बड़े भाई की पत्नी ने सोचा कि उसकी छोटी बहन बड़ी भाग्यशालिनी है।

वर पक्ष के लोगों को गाँव की सीमा तक जाकर विदा करके बड़े बेटे का साला मुँह लटकाये घर लौट आया। बड़े भाई की पत्नी अपने बड़े भाई को निराश देख पूछ बैठी–"भैया, क्या हमारी बहन वर पक्ष वालों को पसंद न आई? तुम उदास क्यों हो?"

"कन्या तो उन्हें पसंद आ गई, पर वे लोग पचास हज़ार रुपये दहेज मांगते हैं!

इतनी रक़म हम कहाँ से ला सकते हैं ?" बड़े भाई के साले ने कहा ।

"बेटा, तुम चिंता न करो, हमारी जो भी जमीन-जायदाद है, बेच-बाचकर दहेज़ दे देंगे । आइंदा हमें ऐसा बढ़िया रिश्ता नहीं मिलेगा !" माँ ने समझाया ।

ये बातें सुन बड़े बेटे का साला एकदम नाराज़ हो गया और बोला–"सारी संपत्ति बेचकर कन्या की शादी कर लें तो आख़िर हमें तो दर-दर भीख मांगना पड़ेगा ।"

इस पर बड़े भाई की पत्नी को बड़ा क्रोध आया और वह खीझकर बोली–"भैया, तुम भी कैसे आदमी हो ? लड़की की शादी का ख़र्च बचाकर ऐश-आराम करना चाहते हो ? आख़िर मर्दों को अपनी मेहनत के बल पर जीना होगा, मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुम ऐसे ख़ुदगरज़ और बेरहम हो ।"

यह बातचीत बड़े बेटे ने सुन ली । उसे अपनी पत्नी की ये बातें शूल जैसी लगीं ।

इसके बाद सभी लोगों ने मिलकर कन्या के भाई को समझाया, आख़िर वह राजी हो गया । इसके बाद दो-तीन दिन अपने ससुराल में बिताकर बड़ा बेटा अपनी पत्नी के साथ अपने गाँव को लौट आया ।

एक दिन उसने अपने छोटे भाई से ऊँची आवाज़ में इस तरह कहा जिससे उसकी पत्नी भी सुन ले–"मेरे छोटे भाई, हम अपनी छोटी बहन की शादी कोई अच्छा रिश्ता देख ठाठ से करेंगे । ज़रूरत पड़ने पर हम अपनी सारी जायदाद बेच डालेंगे ।"

ये बातें बड़े भाई की पत्नी ने सुन लीं, वह आँसू भरकर बोली–"तुम्हें मेरी बातों की बिलकुल परवाह नहीं है, मैंने कभी न सोचा था कि तुम ऐसे बदल जाओगे ?"

"तुम्हारी बातों की मैं परवाह क्यों करूँ ? तुम्हारे तो दो जीभ हैं ! तुम अपने मायके के लिए एक न्याय रखती हो और ससुराल के लिए तो दूसरा ! तुम्हारी बातों को मानकर मैं बेवकूफ़ बनना नहीं चाहता और न मैं अपनी आत्मा को बेचना चाहता हूँ ।" बड़े भाई ने साफ़ कह दिया । इस पर बड़े भाई की पत्नी को अपनी भूल मालूम हुई।

दिली दोस्त

प्राचीन काल में जब ब्रह्मदत्त काशी राज्य पर शासन करते थे, उन दिनों में बोधिसत्व ने एक ब्राह्मण गृहस्थ के घर जन्म लिया। माता-पिता ने उसका नामकरण सत्यानंद किया। दो-चार साल बाद उस ब्राह्मण के एक और पुत्र हुआ जिसका नाम नित्यानद रखा गया।

जब दोनों भाई युवावस्था को प्राप्त होने लगे, तब अचानक उनके माता-पिता का स्वर्गवास हुआ। इस पर अपनी ज़िंदगी से विरक्त होकर दोनों भाइयों ने गंगाजी के उस पार एक ने अपनी कुटी बनाई तो इस पार दूसरे ने अपनी झोंपड़ी बनाई। इस प्रकार वे सन्यासी का जीवन बिताने लगे।

एक दिन, पाताल लोक का सर्पराज मणिकांत मानव का रूप धरकर पृथ्वी पर आ पहुँचा और गंगाजी के किनारे पैदल चलकर जाने लगा। उस वक़्त नित्यानंद की कुटी पर उसकी नज़र पड़ी। छोटी-सी उम्र में ही सन्यासी का जीवन बितानेवाले नित्यानंद को देख मणिकांत अचरज में आ गया। उसंने नित्यानंद को अपना परिचय दिया और बड़ी देर तक उसके साथ वार्तालाप करता रहा।

इस प्रकार धीरे-धीरे नित्यानंद और मणिकात के बीच दोस्ती हुई। उस दिन से बराबर मणिकांत नित्यानंद की कुटी में आने लगा। वे दोनों घंटों दुनियादारी की बातें करते अपना समय बिताने लगे। मणिकांत जब-तब अपना वास्तविक रूप धरकर नित्यानंद के सर पर अपना फण फैला देता और उसे ठण्डी छाया देकर अपने लोक को चला जाता था।

इस प्रकार कई साल गुजर गये। अब नित्यानंद के मन में यह शंका पैदा हो गई

कि इस बात में कोई शक न था कि मणिकांत नित्यानंद का मित्र है, लेकिन स्वभाव से सर्प दुष्ट प्रकृति के होते हैं। किसी कारण से अगर मणिकांत उस पर नाराज़ हो जाय तो वह उसे डस सकता है।

इसी विचार को लेकर नित्यानंद का मन एकदम अशांत हो गया। इस हालत में वह एक दिन गंगाजी को पार करके अपने बड़े भाई सत्यानंद को देखने गया। सत्यानंद अपने छोटे भाई को देख व्याकुल हुए और पूछा–" मेरे प्यारे छोटे भाई, तुम इस प्रकार क्यों कमज़ोर हो गये हो? आख़िर इसकी वजह क्या है?" इस पर नित्यानंद ने सारी बातें साफ़-साफ़ सत्यानंद को सुनाई–" भैया, तुम्हारी बातों से मुझे ऐसा मालूम होता है कि तुम सर्पराज मणिकांत को अपना दिली दोस्त मान रहे हो! फिर भी एक ओर तुम यह सोचकर डरते हो कि कहीं उसके द्वारा तुम्हें कोई हानि पहुँचे! लेकिन यह बताओ, अगर तुम्हारे पास उसके न आने से क्या तुम खुश रह सकते हो?" सत्यानंद ने पूछा।

नित्यानंद थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब बोला–" मुझे ऐसा मालूम होता है कि मणिकांत के मेरे पास न आने पर मेरे मन को शांति मिलेगी। मगर मेरे पास आने से मैं उसे रोक नहीं सकता हूँ!"

यह जवाब सुनकर सत्यानंद हँस पड़ा और बोला–" अच्छा, यह बताओ, वह जब तुम्हारे पास आता है, तब वह किस प्रकार के आभूषण धारण किया रहता है?"

" उसके बदन पर आभूषणों की कोई कमी नहीं होती, लेकिन सब से मूल्यवान एक मणि है जो धक् धक् करते चमकते हुए उसके कण्ठ पर लटकता रहता है!" नित्यानंद ने जवाब दिया।

" भैया, तब तो तुम एक काम करो। इस बार जब सर्पराज तुम्हारे पास आयेंगे, तब तुम उनसे वह क़ीमती रत्न मांग लो।" सत्यानंद ने नित्यानंद को सलाह दी।

इस घटना के दो-तीन दिन बाद मणिकांत नित्यानंद की कुटी में आया। नित्यानंद ने उससे वह मूल्यवान मणि मांगा। इस पर मणिकांत नाख़ुश होकर नित्यानंद की कुटी में बैठे बिना उसी वक़्त वापस चला गया।

दूसरे दिन मणिकांत जब नित्यानंद की कुटी में आया, तब नित्यानंद दर्वाजे पर खड़ा हुआ था। उसने झट पूछा–"कल मैंने आप से वह मूल्यवान रत्न मांगा, आपने मूझे वह रत्न नहीं दिया, क्यों?"

इस पर मणिकांत कुटी में प्रवेश किये बिना ही द्वार पर से वापस लौट गया।

तीसरे दिन जब मणिकांत नित्यानंद की कुटी के समीप पहुँचा ही था कि नित्यानंद ने आगे बढ़कर कड़कते स्वर में पूछा–"आप से मैंने इसके पूर्व दो बार वह रत्न मांगा, पर आपने उसे मुझे नहीं दिया। आज देते हैं या नहीं?"

सर्पराज मणिकांत उदासपूर्ण चेहरा बनाकर बोला–"नित्यानंद, यह मणि असाधारण है! यह मणि वह कामधेनू है जो मैं जो भी चीज़ मांगूँ, दे देता है! यह मेरे लिए कल्पतरु है। ऐसी चीज़ मैं आप को कैसे दे सकता हूँ? इसलिए आज से मैं फिर कभी आपकी कुटी में क़दम न रखूँगा।" यों कहते सर्पराज मणिकांत वापस मुड़कर चला गया।

इसके बाद नित्यानंद ने एक हफ़्ते तक मणिकांत का इंतजार किया, पर वह न

आया। इस पर नित्यानंद इस चिंता के मारे दिन ब दिन कमज़ोर होता गया कि मैंने एक रत्न मांगकर अपने एक दिली दोस्त को खो दिया है!

उस हालत में सत्यानंद अपने छोटे भाई को देखने एक दिन नित्यानंद की कुटी में पहुँचा। अपने छोटे भाई को सूखकर कांटा बने देख सत्यानंद व्याकुल हो उठा और बोला—"नित्यानंद, तुम्हारी तबीयत पहले से कहीं ज़्यादा बिगड़ गई है! क्या तुमने मेरे कहे मुताबिक़ किया है? या अभी तक तुम्हें सर्पराज का पिंड छूट नहीं गया?"

"भैया, आपकी सलाह के मुताबिक़ मैंने सर्पराज़ से वह मणि मांगा। उस दिन से उन्होंने मेरी कुटी में आना बंद किया है। वह इसके पहले मेरी कुटी में आ जाता, अपना फण फैलाकर मुझे छाया देता, उस वक़्त मुझे जो आनंद मिलता था, मैं उसका बयान नहीं कर सकता। अब मुझे ऐसा लगता है कि मैं एकदम पागल हो जाऊँगा। मेरा मन एकदम अशांत हो गया है! इसी चिंता में मैं बिलकुल कमज़ोर हो गया हूँ!" नित्यानंद ने अपने दिल की बात बताई।

इस पर बोधिसत्व बने सत्यानंद ने शांत स्वर में समझाया—"मेरे छोटे भैया, तुम सर्पराज मणिकांत को अपने दिली दोस्त मानकर फूले न समाये, लेकिन ऐसा दिली दोस्त रत्न के मांगने पर अपना मुँह मोड़ कर चला गया है, अब वह तुम्हारा चेहरा तक नहीं देखता। क्या दिली दोस्त का व्यवहार कहीं ऐसा ही होता है? वह तो स्वार्थी है, तुम्हारा सच्चा दोस्त नहीं है! इसलिए ऐसे दोस्त के तुम्हारे यहाँ न आने पर तुम बिलकुल चिंता न करो।"

नित्यानंद ने अपने बड़े भाई की कही हुई बातों की सचाई को समझ लिया। इसके बाद उसने कभी सर्पराज की चिंता न की। शीघ्र ही वह पूर्ण रूप से स्वस्थ बन गया।
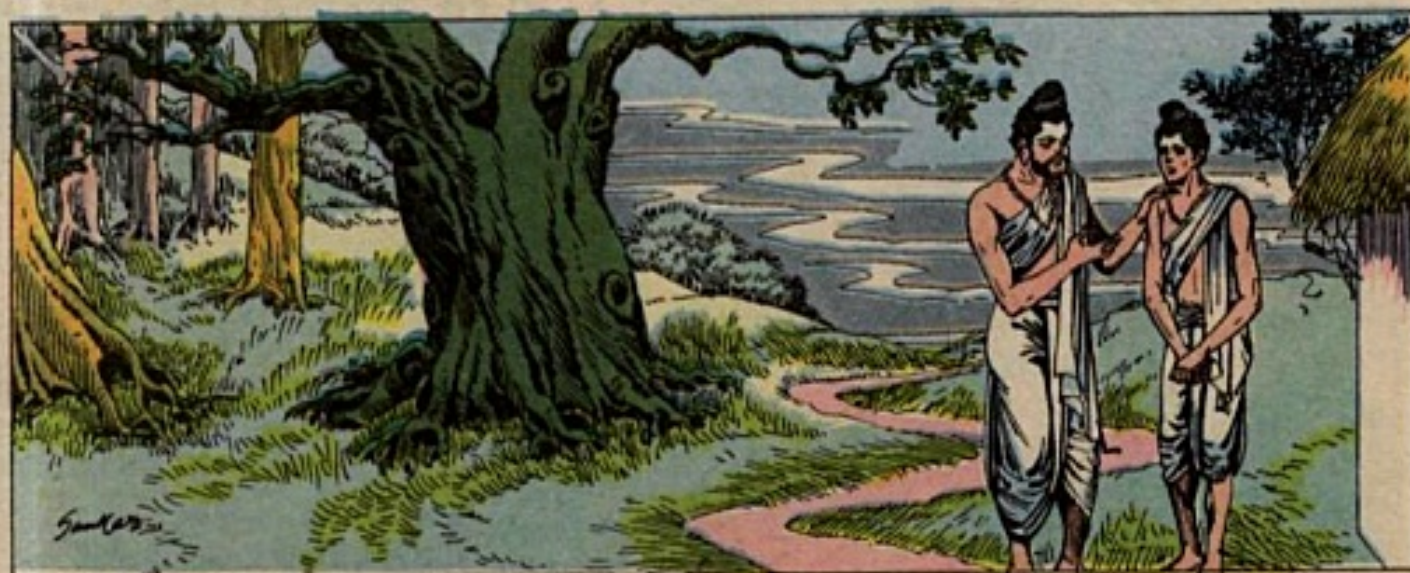
युवान च्वांग यात्राएं-२

गंगा-यमुना के संगम बने प्रयाग नगर ने युवान च्वांग को मंत्र मुग्ध किया। उसने संगम पर स्नान करने वाले हज़ारों यात्रियों के साथ वहाँ पर स्नान करने वाले बंदरों तथा हिरणों के झुंडों को भी देखा।

इसके बाद युवान च्वांग सुप्रसिद्ध बौद्ध विश्व विद्यालय का केन्द्र नालंदा चला गया। वहाँ पर दो सौ पंडितों ने फूल-मालाओं के द्वारा उसका स्वागत-सत्कार किया और प्रधान द्वार से होकर उसे विश्व विद्यालय के अंदर ले गये।

उस विश्व विद्यालय के प्रधान आचार्य शील भद्र थे। उस वक्त वे एक सौ साठ वर्ष के वृद्ध थे, फिर भी अपनी वृद्धावस्था और अस्वस्थता की परवाह किये बिना शील भद्र ने स्वयं विद्यालय के सभी विभागों को युवान को दिखाया। उन्होंने च्वांग को समझाया कि किस प्रकार उन्होंने पहले ही च्वांग की यात्रा का सपना देखा था।
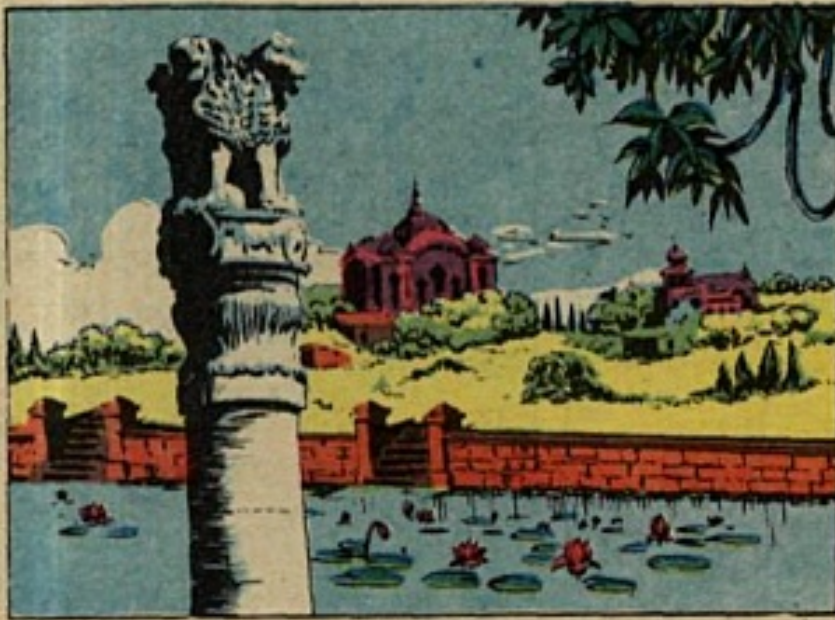
वह विद्यालय अनेक भवनों तथा स्थूपों से शोभायमान था। उसके चारों तरफ जहाँ-तहाँ कमल पुष्पों से शोभित सरोवर थे। वहीं पर अस्सी फुट ऊँची तांबे की बुद्ध की मूर्ति बनी थी। उस विद्यालय में पढ़ने के लिए तिब्बत, श्रीलंका, जावा आदि द्वीपों से विद्यार्थी आया करते थे। नौ मंजिल वाले एक विशाल भवन में बहुत बड़ा पुस्तकालय स्थापित था।

युवान च्वांग ने एक दिन की रात को एक अनोखा सपना देखा। वह यह था कि जहाँ पर विद्यालय के भवन निर्मित हैं, वह प्रदेश उजड़ गया है और एक शिथिल भवन के प्रदेश में पशु चर रहे हैं।

अलावा इसके सपने में एक दिव्य पुरुष ने युवान को दर्शन देकर दूर पर प्रज्वलित होने वाली ज्वालाओं को उसे दिखाया और उसे आदेश दिया कि जहाँ तक हो सके, वह शीघ्र अपने देश को लौट जायें। नालंदा से च्वांग के चले जाने के बाद सचमुच नालंदा एक भयंकर अग्नि कांड का शिकार हो गया।

उन दिनों में एक पहाड़ पर चंदन की लकड़ी से निर्मित बुद्ध की एक मूर्ति थी। यह अफ़वाह प्रचलित थी कि अगर किसी के द्वारा मूर्ति के ऊपर फेंकी गई फूल मालाएँ मूर्ति के हाथों में लटक सकें तो उस व्यक्ति के मन की कामनाएँ पूरी हो जायेंगी। च्वांग ने मूर्ति के ऊपर तीन फूल मालाएँ फेंकी। उनमें से एक माला मूर्ति के कंठ में तथा बाक़ी दो मालाएँ उसके हाथों पर लटक गई।

उस समय के दो सम्राट पुलकेशी तथा हर्षवर्द्धन के बीच अक्सर लड़ाइयाँ हुआ करती थीं। पुलकेशी के पक्ष के वीर हाथियों को नशा चढ़वा कर उन्हें शत्रु पर उकसा देते और उन्हें तितर-बितर कर देते थे। च्वांग ने ऐसी अनेक घटनाओं को अपनी यात्रा-पुस्तक में अंकित किया है।

सम्राट हर्षवर्द्धन ने च्वांग को अपने दरबार में निमंत्रित किया। हर्षवर्द्धन की छोटी बहन राज्यश्री ने च्वांग के आगमन पर एक बहुत बड़े उत्सव का आयोजन किया। हर्षवर्द्धन के मन में ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा को देख च्वांग विस्मय में आ गया था।

हर्षवर्द्धन ने अपनी राजधानी कन्या कुब्ज में अपने सामंत, कवि, पंडित तथा नगर के प्रमुख व्यक्तियों को आमंत्रित कर एक भारी सभा बुलाई। उस सभा में युवान च्वांग ने बौद्ध धर्म के महायान संप्रदाय के बारे में प्रशंसनीय भाषण दिया।

महासभा के अंतिम दिन एक व्यक्ति हर्षवर्द्धन पर छुरी चलाने को हुआ। मगर हर्षवर्द्धन ने उस प्रहार को बचाकर उस दुष्ट को नीचे गिराया। दरियाफ़्त करने पर उस दुष्ट ने बताया कि सम्राट के शत्रुओं ने उनका वध करने के लिए उसे भेज दिया है। इस पर हर्षवर्द्धन ने उसे क्षमा करके सकुशल वापस भेज दिया।

इसके बाद युवान च्वांग तक्षशिला तथा कश्मीर के प्रदेशों से होते हुए चीन देश में पहुँचा। वैसे च्वांग भारत में अकेले आया था, पर लौटते वक्त वह अपने साथ सौ अंगरक्षकों तथा बीस घोड़ों पर बौद्ध धर्म के प्रमुख ग्रंथ, मूर्तियाँ और चित्र ले गया। चीन के सम्राट तायचुंग ने युवान का अपूर्व सम्मान किया।

जल्दबाजी

शिवराम शहर में सब से बड़ा अधिकारी था। फिर भी स्वभाव से वह जल्दबाज था।

एक दिन वह अपने कुछ मित्रों के साथ सैर करने निकला और लौटते वक्त रास्ते में उसे एक थैली पड़ी मिली। उसमें एक हजार रुपये थे। शिवराम के दोस्तों ने उसे समझाया कि उस थैली को अदालत में सौंप दे तो खोने वालों के पास पहुँचा दी जाएगी। पर शिवराम ने उनकी सलाह को न माना और अपने साथियों के साथ उसने भी वे रुपये बराबर बांट लिये। यह काम शिवराम के अनुचरों को पसंद न आया, मगर वे एक बड़े अफ़सर थे, इसलिए बाक़ी लोग चुप रह गये।

घर लौटने पर उसने देखा कि गाँव से उसकी सास आई हुई है! शिवराम को देखते ही बोली—"बेटे, इस साल तुम्हें कपड़े ख़रीद कर मैंने नहीं दिये, इसलिए गाड़ी बेचकर एक हज़ार रुपये ले आई हूँ।" यों कहते उसने बड़ी थैली में हाथ रखकर कहा—"दामाद, रुपयों की थैली दिखाई नहीं दे रही है। शायद रास्ते में कहीं गिर गई होगी! तुम अभी जाकर थाने में रपट करो।" अपनी सास की बातें सुन शिवराम अवाक् रह गया।

दुष्टोंकी दोस्ती

एक गाँव में एक सन्यासी रहा करता था। वह गाँव के छोर पर एक झोंपड़ी में निवास करता था। उसके भक्त प्रति दिन सन्यासी के वास्ते फल, मिठाई और खाना लाकर दे जाते थे। इस तरह सन्यासी का गुजारा होता था। अगर किसी दिन सन्यासी को खाना न मिलता तो वह उपवास करता, मगर खाने की फ़िक्र नहीं करता था। सन्यासी के एक भक्त को मालूम हुआ कि इधर कुछ दिनों से सन्यासी उपवास करता है, उसने सन्यासी को एक दुधारू भेंस लाकर भेंट में दे दी। भेंस का निवास भी उसी झोंपड़ी के अन्दर था।

एक चोर के मन में सन्यासी की भेंस को चुराने की कुबुद्धि पैदा हो गई। यह काम वैसे उसके वास्ते कोई मुश्किल न था; क्योंकि एक तो झोंपड़ी गाँव के छोर पर थी और साथ ही उस पर कोई ताला नहीं लगता था। सन्यासी के सोते वक़्त भेंस को खोल कर चुपके से हांक कर ले जाया सकता था। यही विचार करके एक अंधेरी रात में चोर सन्यासी की झोंपड़ी की ओर चल पड़ा।

रास्ते में एक और आदमी से चोर की मुलाक़ात हुई और वह भी चोर के पीछे चलने लगा। चोर ने उसे देख कड़क कर पूछा–"तुम कौन हो? मेरे पीछे क्यों चलते हो? मैं किसी दूसरे काम पर अपने रास्ते जा रहा हूँ! तुम अपने रास्ते क्यों नहीं चले जाते?"

इस पर दूसरा आदमी बोला–"मैं एक भूत हूँ। गाँव के छोर पर रहने वाले सन्यासी को मारने जा रहा हूँ! यह सन्यासी जब से इस गाँव में आया, तब से इस गाँव के लोग शांति से रहने लगे हैं।

इसलिए मेरा व्यापार ठप्प पड़ गया है। गाँव में अत्याचार, अन्याय और पाप बिलकुल घट गये हैं! इसलिए उस सन्यासी को मार करके मैं फिर से इस गाँव में अपना प्रभुत्व जमाना चाहता हूँ। लेकिन यह तो बताओ, तुम आखिर कहाँ जा रहे हो?"

"दर असल मेरा पेशा चोरी करने का है! मैं भी उसी सन्यासी की झोंपड़ी में जा रहा हूँ। मगर मेरा उद्देश्य सन्यासी को जान से मार डालने का नहीं है। इधर कुछ दिन पहले एक भक्त ने सन्यासी को एक दुधारू भैंस भेंट में दे दी है, मैं उसको चुराने जा रहा हूँ।" चोर ने सच्ची बात कह दी।

भूत और चोर दोनों सन्यासी की हानि करने जा रहे थे, इसलिए उन दोनों के बीच दोस्ती हो गई। दोनों हाथ में हाथ डाले सन्यासी की झोंपड़ी की ओर चल पड़े। कहीं कोई आहट न थी। सन्यासी झोंपड़ी के भीतर सो रहा था।

चोर मन ही मन सोचने लगा—"पहले अगर यह भूत सन्यासी को मारने जाएगा तो सन्यासी जाग कर चिल्ला उठेगा, इस पर सब लोग वहाँ पर जमा हो जायेंगे। तब मैं भैंस की चोरी नहीं कर पाऊँगा। इसलिए इससे पहले मेरा काम पूरा करना अच्छा होगा।"

इसी वक़्त भूत भी अपने मन में यों विचार करने लगा—"अगर यह चोर पहले

भैंस को चुराने की कोशिश करेगा तो भैंस चिल्लाएगी, ऐसी हालत में सन्यासी जाग पड़ेगा। सन्यासी की चिल्लाहट सुनकर कई लोग वहाँ पर जमा हो जायेंगे। ऐसी हालत में मैं सन्यासी को मार न पाऊँगा।"

यों सोचकर प्रकट रूप में भूत चोर से बोला—"मेरे छोटे भाई, मैं पहले सन्यासी को मार डालूंगा। इसके बाद तुम बेफ़िक्र होकर भैंस को हांक ले जाओ! तुमको रोकने वाला कोई न रहेगा।"

इस पर चोर बोला—"भैया, ऐसा कभी नहीं हो सकता। पहले मुझे चुपचाप भैंस को हांक ले जाने दो, तब तुम बेफ़िक्र होकर सन्यासी को मार डाल सकते हो! मेरा काम तो हल्का-सा है।"

इस बात को लेकर दोनों के बीच वाद-विवाद बढ़ता गया। धीरे-धीरे वे चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे—"मैं पहले अपना काम पूरा करूंगा, और मैं पहले अपना काम पूरा करूंगा।"

आखिर चोर ने ऊँची आवाज़ में चिल्लाकर कहा—"देखो सन्यासीजी, तुम को मारने के लिए यह भूत यहाँ पर आ गया है। सावधान हो जाओ।"

भूत गुस्से में आकर चिल्लाकर बोला—"सन्यासी, देखो तो सही, यह बदमाश चोर तुम्हारी भैंस को चुराने के लिए आ गया है।"

उन दोनों की चिल्लाहटें सुन कर सन्यासी जाग पड़ा और साथ ही अड़ोस-पड़ोस के लोग लाठी, तलवार व भाले लेकर दौड़े-दौड़े वहाँ पर आ पहुँचे। इसे देख चोर भागने लगा। उनमें से कुछ लोगों ने भागने वाले चोर का पीछा करके उसे पकड़ लिया, साथ ही एक ओझा ने वहाँ पर भूत को बन्दी बनाकर उसका मारण होम किया।

सच है कि दुष्टों के बीच की दोस्ती ज्यादा देर नहीं टिकती!

सच्चा दोस्त

बचपन से ही रामदास में डींग मारने की आदत थी। उसके पिता ने कई बार उसे समझाया कि यह कोई अच्छी आदत नहीं है; लेकिन रामदास अपनी आदत को बदल न पाया।

रामदास शाकाहारी था। वह अपने को अहिंसावादी बताकर डींग हांका करता था। साथ ही मांसाहारियों का मज़ाक उड़ाया करता था। उन लोगों की जानवरों को मारने वाले दुष्ट कह कर निंदा किया करता था।

एक दिन रामदास के घर में एक काला नाग आ घुसा। रामदास के बाप ने नाग को मार डाला। नाग को मारने में रामदास ने भी अपने बाप की मदद की।

"क्या काला नाग को मारना हिंसा नहीं है?" रामदास के एक दोस्त ने उससे पूछा।

"कभी नहीं, क्योंकि नाग मेंढकों और चूहों को मार डालता है। एक नाग के मरने पर कई और प्राणी बचाये जा सकते हैं। इसीलिए मैंने उसे मार डाला, लेकिन अपनी जान बचाने के लिए नहीं! समझें!" रामदास ने जवाब दिया।

इस पर रामदास के दोस्त ने कहा–"मैं भी इसलिए बकरियों को मारकर खाता हूँ कि उन्हें ज़िंदा रखने पर वे खेतों में घुस कर फसलें और घास चर जाती हैं, जिससे तुम जैसे लोगों के लिए खाना तक न रह जाएगा!" रामदास के दोस्त ने कहा।

रामदास ये बातें सुनकर भी अनसुनी रह गया। पर इसके बाद भी उसने डींग मारना बंद नहीं किया।

रामदास के दो दिली दोस्त थे। उन्होंने भी उसे सलाह दी कि डींग मत मारो। पर रामदास ने उनसे कहा–

रमा श्रीवास्तव

"दोस्तो, मैं हमेशा सच बोलता हूँ, झूठ कभी नहीं बोलता ।"

एक दिन वे तीनों दोस्त गाँव के बीच एक पीपल पेड़ के नीचे बैठकर बातचीत कर रहे थे । तब वहाँ पर चौथे ने आकर पूछा—"देखने में तुम लोग अच्छे दोस्त मालूम होते हो! मेरे भी दिल में तुम लोगों से दोस्ती करने की इच्छा हो रही है ।"

चौथा आदमी पड़ोसी गाँव का था । जो किसी काम से उस गाँव में आया था । उस दिन रात को किसीके घर आराम करके दूसरे दिन जानेवाला था ।

रामदास के एक दोस्त ने गहरी सांस लेकर कहा—"हम भी कैसे अच्छे दोस्त हैं? एक दूसरे की त्रुटियों को सुधार नहीं पा रहे हैं! सच्चा दोस्त तो वही होता है जो अपने दोस्त को सुधार सकता है !"

"तब तो मैं सच्चा दोस्त हूँ!" चौथे ने कहा ।

"ओह, ऐसी बात है! तब तो बताओ, हममें से किसकी दोस्ती तुम्हें ज्यादा पसंद है?" रामदास ने पूछा ।

"चेहरा देखकर मनुष्य का मूल्य हांकना बड़ा ही मुश्किल है! तुम तीनों में से जो आज रात को अपने घर मुझे आश्रय देगा, उसीके साथ दोस्ती करना मैं ज्यादा पसंद करूँगा ।" चौथे ने जवाब दिया ।

फिर क्या था, बाक़ी तीनों मित्रों में चौथे को अपने घर आश्रय देने की होड़ लग गई । तब चौथे ने कहा—"तुम लोग होड़ मत लगाओ, तुम में से जो आदमी मेरे सवाल का सही जवाब देगा, मैं उसीके घर आज रात ठहरूँगा ; पर शर्त यह है कि तुम लोगों को झूठ नहीं बोलना चाहिए ।"

इस शर्त को तीनों मित्रों ने मान लिया । "धन के बारे में तुम लोग अपने अपने विचार बताओ!" चौथे ने सवाल किया ।

"यह दुनिया पैसे के बल पर चलती है, मैं धन को अपनी जान से ज्यादा मानता हूँ । लाखों रुपये कमाने की मेरी इच्छा

है, लेकिन मैं गरीब हूँ।" रामदास के दोस्तों में से एक ने कहा।

"मैं भी गरीब हूँ। मैं धन कमाने के तरीके भी जानता हूँ, पर सच्ची बात यह है कि जितना भी धन कमावे, मनुष्य संतुष्ट नहीं होता। इसीलिए मैं अपनी ज़रूरत से ज्यादा धन नहीं कमाता।" रामदास के दूसरे दोस्त ने कहा।

इस पर रामदास ने मुँह बनाकर गर्व से कहा—"दर असल हम अपने को जो 'मैं' 'मैं' मानते हैं, वह 'मैं' नहीं हूँ। जिसे हम अपना बताते हैं, वह मेरा नहीं है! क़िस्मत के खुल जाने पर अगर किसी के घर धन जुड़ता है तो मनुष्य अहंकार में आकर यह सोचता है कि उस धन को उसी ने कमाया है। मेरे पास काफी धन है, लेकिन धन के प्रति मेरे मन में ममता नहीं है। मेरे मन में यह भावना भी नहीं है कि यह धन मेरा है।"

इस पर चौथे ने रामदास की बड़ी तारीफ़ करते हुए कहा—"तीनों में से तुम्हारे विचार ही तारीफ़ के काबिल हैं! इसलिए मैं तुम्हारे साथ ही दोस्ती करना चाहता हूँ।"

ये बातें सुन रामदास फूला न समाया और उसने पूछा—"दर असल धन के बारे में तुम्हारे क्या विचार हैं?"

"मैं अपने विचार तुम्हें कल बताऊँगा।" चौथे ने जवाब दिया।

रामदास उस चौथे आदमी को अपने घर ले गया। सारा मकान दिखाकर अतिथि-सत्कार किया। रात को खाना खिलाकर उसके सोने का इंतजाम किया। रामदास और चौथा आदमी भी एक ही कमरे में सोये।

सवेरे उठकर रामदास ने देखा, वह नया मेहमान गायब था। रामदास ने सोचा कि वह मेहमान सवेरे ही जागकर शायद पिछवाड़े में कुएँ के पास नहाता होगा। पर वह कुएँ के पास भी न था। घर के लोगों से दरियाफ़्त किया तो सभी ने

यही बताया कि सवेरे उसको किसी ने देखा नहीं है। इसका मतलब था कि रात को उठकर वह किसी से बताये बिना चल दिया है।

इस शंका के पैदा होते ही रामदास का कलेजा कांप उठा। यह भी उसके मन में संदेह हुआ कि शायद वह चोर हो। तुरंत रामदास ने अपने कमरे में जाकर संदूक़ खोलकर देखा। उसमें से एक हज़ार सिक्के, सोने की माला और कर्णफूल गायब थे। पर संदूक़ में से उसे एक चिट मिला। उसमें लिखा हुआ था :

"दोस्त, मैं वैसे धन पर जान नहीं देता, लेकिन सबको धन की ज़रूरत होती है। वैसे धन कमाने के कई मार्ग मैं जानता हूँ, फिर भी मैं किसी के दिल को दुखाना नहीं चाहता, इसलिए मैं साधारणत: चोरियाँ नहीं करता, धन के प्रति ममता न रखने वाले तुम जैसे एक दोस्त का मिल जाना मेरे लिए ही क़िस्मत की बात है।"

रामदास ने समझ लिया कि चौथे व्यक्ति ने ही वह चिट लिखकर संदूक़ में रख छोड़ा है, पर उसने धन के चोरी होने की बात अपने परिवार वालों को नहीं बताई। अपने दोस्तों को वह चिट दिखा कर सारा समाचार उन्हें सुनाया और आँखों में आँसू भरे।

दोस्तों ने उसे समझाया-"तुम्हारे मन में धन के प्रति कोई ममता नहीं है न? इसलिए तुम फ़िक्र मत करो।"

"अरे, तुम लोग मुझे क्यों और सता रहे हो? अब मैं अपनी ज़िंदगी भर में कभी डींग न मारूँगा।" रामदास ने कहा।

"अगर तुम अपनी इस बात पर अडिग रहो तो चौथा व्यक्ति सचमुच तुम्हारे लिए सच्चा दोस्त कहला सकता है। क्योंकि उसने तुम्हारी त्रुटियों को दूर कर दिया है।" रामदास के दोस्तों ने कहा।

ये बातें सुनने पर रामदास की समझ में यह बात न आई कि अपने दोस्तों के इस कथन पर उसे रोना है या हंसना है?

हीरे की परख

श्रावणपुर में गोपाल नामक एक युवक रहा करता था। उसका बाप मर चुका था। इसलिए उसकी विधवा माँ ने गोपाल को पाल-पोस कर बड़ा किया और पढ़ाया-लिखाया। पढ़ाई के समाप्त होते ही वह नौकरी पाने का प्रयत्न करने लगा।

एक दिन गोपाल की माँ ने उसे समझाया–"तुम्हारे चाचा राजधानी नगर में राज दरबार में काम करते हैं। तुम जाकर उनसे मिल लो तो, वे कोई न कोई नौकरी तुम्हें ज़रूर दिलायेंगे।"

गोपाल राजधानी पहुँचकर अपने चाचा मदन मोहन से मिला और नौकरी दिलाने की प्रार्थना की। मदन मोहन ने गोपाल को समझाया–"राज दरबार में मेरे चार जान-पहचान के लोग हैं। मैं तुम्हें उनका परिचय कराऊँगा। वे लोग तुम्हें ज़रूर कोई न कोई नौकरी दिलायेंगे।

इसके बाद मदन मोहन गोपाल को सब से पहले दरबार के प्रधान अधिकारी दुर्वास के पास ले गया।

मदन मोहन के मुँह से सारी बातें सुन कर दुर्वास ने गोपाल को एड़ी से लेकर चोटी तक देखा और कहा–"इस छोटी-सी उम्र में नौकरी क्या कर सकता है?"

मदन मोहन ने गिड़-गिड़ाकर दुर्वास से निवेदन किया–"आप कृपया ऐसा मत कहियेगा। आप को छोड़कर कोई भी मेरे भतीजे की सहायता नहीं कर सकते। मुझे पूरा यक़ीन है कि आप चाहेंगे तो इसको ज़रूर कोई न कोई नौकरी दिला सकते हैं!"

तुम ज़्यादा वाद-विवाद न करो। अपने भतीजे से कह दो कि वह थोड़े दिन बाद फिर मुझसे एक बार मिल ले।" दुर्वास ने डांटनेवाले स्वर में कहा।

सुधाकर द्विवेदी

गोपाल ने कमरे से बाहर आते ही मदन मोहन से कहा–"चाचाजी, ऐसे क्रोधी आदमी हमारी मदद क्या कर सकते हैं ? मेरी वजह से नाहक़ आपको तक़लीफ़ हुई !" इस पर मदन मोहन ने हँसकर जवाब दिया–"गोपाल, वैसे ऊपर से देखने में वे कठोर दिखाई देते हैं, लेकिन उनका दिल मक्खन जैसा कोमल है । अभी कोई जल्दी नहीं है । तुम चार दिन बाद फिर इनसे मिल सकते हो ।" पर गोपाल ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि फिर से दुर्वास से मिलना बेकार है ।

इसके बाद मदन मोहन गोपाल को तीन और अधिकारियों के पास ले गया और उनका परिचय कराया । तीनों ने मदन मोहन के साथ अच्छा व्यवहार किया और गोपाल के प्रति बड़ा स्नेह भाव दिखाया ।

पहले बुज़ुर्ग ने कहा–"मदन मोहनजी, इस छोटी-सी बात के लिए आप को आने की क्या ज़रूरत है ? आप सिर्फ़ इस लड़के को मेरे पास भेज देते तो मैं आपका काम कर देता । कल आप अपने भतीज को एक बार मेरे यहाँ भिजवा दीजिए ।"

मदन मोहन ने हामी भर दी और जब वह चलने को हुआ, तब उसे अलग बुला ले जाकर पूछा–"मैंने इसके पहले आप से निवेदन किया था कि मेरे भानजे के खेत के बारे में कोई मुक़द्दमा है, मेहर्बानी करके दीवान साहब को समझा कर उसे हल कर दीजियेगा ।"

महन मोहन ने 'हाँ' कह दिया और गोपाल को लेकर दूसरे अधिकारी के पास पहुँचा । उन्होंने भी गोपाल को नौकरी दिलाने की बात कहकर पूछा–"मेरे साढ़ू आपसे कोई मदद चाहते हैं, कृपया बताइये कि मैं उनको आपके पास कब भेजूं ?"

मदन मोहन ने उसको अपने पास भेजने की बात कही, तब तीसरे अधिकारी के पास पहुँचा । उन्होंने भी गोपाल को नौकरी दिलाने का आश्वासन दे दिया, तब कहा–"लड़का तो देखने में बड़ा चुस्त

मालूम होता है, मैं उसे कोई न कोई नौकरी ज़रूर दिलाऊँगा, लेकिन क्या मेरी दूसरी बेटी के साथ आपके भानजे की शादी करने के लिए आप तैयार हैं?"

"यह बात बाद को देख लेंगे। पहले इसको नौकरी तो दिलाइये।" मदन मोहन ने कहा।

इसके बाद जब मदन मोहन और गोपाल घर लौटने लगे, तब उसने गोपाल को समझाया-"तुम प्रति दिन इन चारों आदमियों से मिल लिया करो, कोई न कोई तुम्हें ज़रूर नौकरी दिलायेंगे।"

दूसरे दिन से गोपाल दरबार में जाकर दुर्वास को छोड़ बाकी तीनों अधिकारियों से मुलाक़ात करता रहा। चार दिन बाद मदन मोहन ने गोपाल से पूछा-"तुम्हारी नौकरी का प्रयत्न कहाँ तक सफल हुआ है?"

"सब कोई मेरे साथ वैसे अच्छा बर्ताव कर रहे हैं। मगर नौकरी देने में आज व कल पर टालते जा रहे हैं!" गोपाल ने जवाब दिया।

मदन मोहन ने गोपाल की ओर शंका भरी नज़र डालकर पूछा-"मालूम होता है कि तुम दुर्वास साहब से नहीं मिले?"

"चाचाजी, उनसे मिलने पर कोई फ़ायदा न होगा। उस दिन मेरी ओर उन्होंने ऐसी नज़र डाली कि मुझे एकदम उन पर गुस्सा आ गया। इसलिए मैं आज तक उनसे मिला नहीं।" गोपाल ने जवाब दिया।
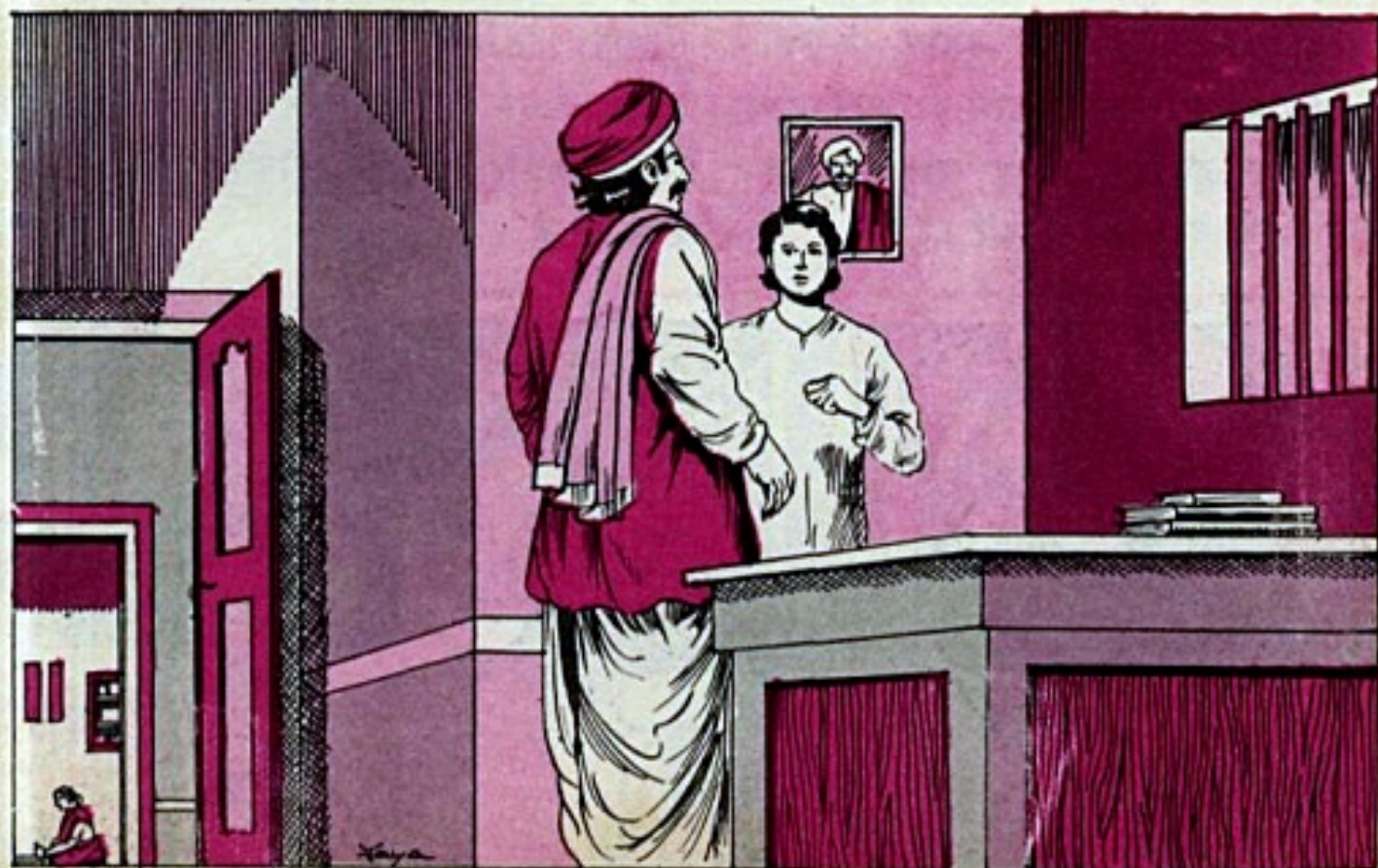
"तुमने बड़ी भूल की। उनसे भी जरूर मिला करो।" मदन मोहन ने समझाया।

दूसरे दिन गोपाल दुर्वास से मिला। उसने गोपाल से पूछा—"तुम क्या-क्या काम कर सकते हो?" ये सवाल सुनने पर गोपाल को बड़ी ख़ुशी हुई। उसने ख़ुशी से अपनी पसंद के काम बताये।

दुर्वास ने आदेश के स्वर में कहा—"तुम हमारे पिछवाड़े के पौधों को पानी सींच कर आ जाओ।,'

गोपाल ने कल्पना तक नहीं की थी कि दुर्वास उसे ऐसा काम बतायेगा। मगर चुपचाप उसने वह काम कर दिया। इसके बाद वह बाक़ी तीनों अधिकारियों से भी मिला। उन तीनों ने रोज की तरह उसका आदर किया, लेकिन उससे कोई काम न लिया।

इसके बाद दूसरे दिन गोपाल दुर्वास से मिला। उसे देखते ही दुर्वास ने कहा—"आज हमारा नौकर काम पर नहीं आया है। तुम हमारा मवेशी खाना साफ़कर उन्हें चारा देकर आ जाओ।"

गोपाल ने यह काम भी चुपचाप कर दिया। इस प्रकार रोज दुर्वास गोपाल से कोई न कोई काम लेता, पर नौकरी की बात उसने बिलकुल न उठाई।

एक दिन अचानक दुर्वास ने मदन मोहन को बुला भेजा, उस वक़्त गोपाल दुर्वास पास ही खड़ा था। दुर्वास ने मदन मोह से कहा—"भाई साहब, तुम्हारे भतीजे के लिए ऐसा कोई काम नहीं है जो नामुमकिन हो। तुम्हारा भतीजा तो तराशे गये हीरे जैसे हैं! मैं उसे दरबारी नौकरों का अधिकारी नियुक्त कर रहा हूँ। कल आकर वह अपने काम पर लग जाये।"

घर लौटने पर मदन मोहन ने गोपाल को समझाया—"देखा है न? मैंने पहले ही तुम्हें बताया था कि दुर्वास नरम दिल के हैं। उन्होंने कई तरह से परीक्षा करके तुम्हारी सामर्थ्य का पता लगाया है। बाक़ी तीनों ने मेरे द्वारा अपनी स्वार्थ सिद्धि करके तुम्हारी नौकरी की बात छोड़ दी है।"

गणाधिपत्य के पट्टाभिषेक के वास्ते विघ्नेश्वर के लिए पार्वती ने चमकीले रंग-बिरंगे वस्त्र चुने, लेकिन विघ्नेश्वर ने सफ़ेद वस्त्र धारण किया ।

इसे देख पार्वती ने पूछा–"सुनो बेटा, जिस वक़्त अच्छे कपड़े पहनने हैं उस समय तुम शुक्लांबरधर कहलाते हो?"

"अच्छे कपड़े ही धारण किये हैं न, माँ। सफ़ेद रंग उत्तम स्वभाव और विवेक का परिचय देता है!" विघ्नेश्वर ने कहा ।

इसके बाद पट्टाभिषेक हुआ और विघ्नेश्वर गणनाथ बन गये । जयलक्ष्मी नाम धारिणी सिद्धि तथा विद्यावती नाम वाली बुद्धि विघ्नेश्वर को वर कर उनके दोनों ओर खड़ी हो गईं । इस पर गणनाथ सिद्धि-बुद्धि विनायक कहलाये । उसी समय आठों दिशाओं से अष्ट सिद्धियाँ सुंदर कन्याओं के रूप धर कर आ पहुँचीं और वकुल मालाएँ पहना कर गणेशजी को वर लिया । इस पर विघ्नेश्वर सिद्धि विनायक कहलाये । उनके विवाह का उत्सव वैभव पूर्वक संपन्न हुआ ।

विष्णु ने विघ्नेश्वर से कहा–"आज से यह नई कहावत चल पड़ी कि कोटि विघ्न पड़ने पर भी विनायक की शादी नहीं रुकेगी । हे कल्याण गणेश! अब आपके हाथों द्वारा विवाह होने हैं। जिनके विवाह होते हैं, उनके जन्म धन्य हो जाते हैं!"

विघ्नेश्वर ने उत्तर दिया–"हाँ, हाँ! ऐसा ही होगा! आप कौसल्या के गर्भ से

रामचन्द्रजी के रूप में अवतरित होकर रावण का अंत करेंगे ।"

इस पर पुनः विष्णु बोले–"गजानन, आप का प्रसन्न वदन देखने पर हाथी के प्रति ममता पैदा हो रही है!"

"हां, आप भी मगरमच्छ की पकड़ से गजेन्द्र की रक्षा करके करिवरद कहलायेंगे न?" विघ्नेश्वर ने कहा ।

इसके उपरांत आठ सिद्धि वनिताएं विघ्नेश्वर पर चँवर डुलाने लगीं। विघ्नेश्वर सिंहासन पर सिद्धि-बुद्धि आदि के घेरे में इस तरह शोभायमान थे जैसे तारों के बीच चन्द्रमा सुशोभित होता है। उस वक़्त लक्ष्मी देवी अपना मुँह मोड़कर जाने लगीं, तब विष्णु ने उनको रोककर विघ्नेश्वर से कहा–"सिद्धि विनायक! यह अफ़वाह फैली हुई है कि लक्ष्मी स्थिर नहीं हैं, चंचल हैं! आप इन्हें अपनी गोद में बैठने दीजिये न? शायद इस प्रकार लक्ष्मी देवी को स्थिरता प्राप्त हो जाय!"

विघ्नेश्वर अत्यंत प्रसन्न होकर बोले–"माता लक्ष्मीदेवी को अपनी गोद में बिठाने का भाग्य मुझे प्राप्त हो रहा है! मैं धन्य हूँ।" यों कहकर विघ्नेश्वर ने लक्ष्मी के चरणों में अपनी सूंड़ लपेट कर अपनी दायीं जांघ पर उनको बिठा लिया।

इसे देख विष्णु बोले–"इस वक़्त विघ्नेश्वर 'लक्ष्मी गणपति' हो गये हैं! माता जिस प्रकार अपने पुत्र का ख्याल रखती है उसी प्रकार जिसको विघ्नेश्वर का अनुग्रह प्राप्त होगा, वहां पर लक्ष्मी स्थिर निवास करेंगी।"

उसी समय नारद बोले–"ओह, विघ्नेश्वर के लिए आखिर कितने नाम हैं। सिद्धि विनायक, लक्ष्मी गणपति, शुक्लांबरधर–और न मालूम कितने नाम हैं!" यों कहते-कहते वे अपनी महती वीणा झंकृत करते विघ्नेश्वर के शत कोटि सहस्त्र नामों का स्मरण करते "जय जय जन गण नायक जय हे।" गाते सारे लोकों का संचार करने लगे।

एक दिन विघ्नेश्वर चूहे के वाहन पर आकाश मार्ग में यात्रा करते विन्ध्याचल को पार कर दक्षिण में एक बड़े काले पर्वत पर उतर गये। उस प्रदेश में केले के वन फैले हुए थे। उस पहाड़ की तलहटी में शबर जाति के लोग ढोल व डफलियाँ बजाते उत्सव मना रहे थे।

विघ्नेश्वर एक सुंदर बालक का रूप धरकर उस उत्सव के समीप पहुँचे। शबर लोग उस बालक को घेरकर बोले-"देवता ने हमारे वास्ते एक सुंदर बालक को भेज दिया है!" यों कहते उस बालक को उठा ले जाकर शबरों ने उसे उत्सव के बीच उतारा।

वहाँ पर खून की धाराओं से सिंची एक बड़ी काली शिला थी। उसके सामने एक छोटा-सा गूँगा बालक रो रहा था। उस बालक के बदन पर हल्दी पोत दी गई थी। उसकी कमर में काला वस्त्र लपेटा गया था और उसके कंठ में लाल मंदार माला शोभित थी।

बालक के रूप में स्थित विघ्नेश्वर इसे देख शबरों के नेता से बोले-"मैं तुम्हारे देवता के साथ बातचीत करना चाहता हूँ। तुम लोग मुझे उनके पास ले जाओ।"

इस पर शबर नायक खिल-खिलाकर हँस पड़ा और बोला-"ओह, तुम भी बड़े विचित्र बालक हो! क्या तुम हमारे देवता के साथ बातचीत करोगे? हमारे देवता तो घने अंधकार जैसे काले होते हैं और भयंकर लगते हैं, उनको कोई देख नहीं सकता। अगर देखता है, तो डर के मारे खून उगलकर मर जाएगा!"

इस पर विघ्नेश्वर हँस पड़े, झट उस वध्य शिला के पास पहुँचकर बोले-"तुम लोग अपने भय की वजह से अपने ही देवता को भयंकर मानते हो! भय को ही तुम लोग भक्ति मान बैठे हो! तुम में से किसी ने भी तुम्हारे देवता को नहीं देखा है! तुम्हारे देवता ने कभी इस तरह के उत्सव और बलि की माँग नहीं की है। तुम्हारे देवता बड़े ही सुन्दर हैं!" यों

समझाकर बालक विघ्नेश्वर ने अपनी हथेली से उस शिला को थपथपाया। फिर क्या था, काली शिला एक सफ़ेद केले के पौधे जैसे सुंदर देवता-मूर्ति में बदल गई। घुटनों पर हाथ फैलाकर बैठी देवता मूर्ति हंस मुख को लेकर अत्यंत मनोहर दिखाई दी। दूसरे ही क्षण विघ्नेश्वर ने उस गूंगे बालक के सर पर हाथ फेरा।

गूंगा बालक अचानक चिल्ला उठा–"स्वामीजी, मैं आपकी शरण में आया हुआ हूँ।" यों वह गूंगा बालक देवता के स्त्रोत्र पढ़ने लगा।

काली शिला का मूर्ति में बदल जाना और गूंगे का बोलना पल भर के अंदर हो गया। उन अद्भुतों को देख शबर लोग डरते-डरते प्रणाम करने लगे।

बालक के रूप में स्थित विघ्नेश्वर ने उनको रोकते हुए कहा–"तुम लोग मुझे प्रणाम मत करो। अपने भय को त्याग कर प्रेम से अपने देवता को प्रणाम करो! तुम लोग जिस देवता को मानते हो, उनको अपने पिता, भाई और मित्र के रूप में मान लो! बलि देना आदि दुष्ट कार्य छोड़कर तुम लोग फल, पुष्प व केले के तोरणों के साथ खुशी से उत्सव मनाओ! यह गूंगा बालक जो अभी-अभी बोलने लगा है, यही तुम लोगों के गुरु और देवता के पुजारी के रूप में रहेगा! मैं तुम लोगों के देवता के पास जा रहा हूँ। तुम्हारे देवता तुम लोगों को जरूर दर्शन देंगे।" यों समझा कर विघ्नेश्वर पहाड़ पर चढ़ गये।

शबरों ने थोड़ी दूर तक उनका अनुसरण किया और बाद को रास्ते में रुक गये।

विघ्नेश्वर बालक के रूप में ही पर्वत की चोटी पर पहुँचे। वहाँ पर भैरव स्वामी अपना सर झुकाये उदास बैठे थे। उनका शरीर काले बादल जैसा था।

विघ्नेश्वर ने दौड़कर अपने हाथों से भैरव के साथ आलिंगन किया। उसी क्षण भैरव का शरीर सफ़ेद चांदनी जैसी कांति के साथ दमक उठा। दिव्य मंगल रूप को

धर कर भैरव बालक विघ्नेश्वर से आनंद पूर्वक गले लग कर बोले–"मैं जानता हूँ कि आप विघ्नेश्वर हैं! मेरे अवतरण के समय आकाशवाणी ने बताया था कि आपके अनुग्रह से मेरा काला रूप अदृश्य होकर मुझे देवत्व की सिद्धि मिलेगी। इस पहाड़ पर चढ़ने का कोई साहस नहीं करते। मुझे देख डर के मारे पक्षी भी कलरव नहीं करते और न चहक उठते हैं। मैं अपने ही रूप के साथ घृणा करते चिरकाल से आप का इंतजार कर रहा हूँ! आप अपना वास्तविक रूप दिखा कर मुझे धन्य कीजिए!"

इस पर विघ्नेश्वर अपना निज रूप धर कर बोले–"आज से आप देवता के रूप में पूजा पाने वाले स्वामी बन गये हैं। आपके भीतर शिव और केशव दोनों हैं। आप का वृत्तांत जब माताजी ने मुझे सुनाया, तब से मैं आप से मिलने को व्यग्र था। मोह तो अंधकार जैसा होता है! शिवजी मोहावेश में आकर जगन्मोहिनी रूपधारी विष्णु के पीछे पड़ गये। शिव और विष्णु के तेज के मिलन से आप का अवतरण हो गया है। इसी कारण आप को काला रूप प्राप्त हो गया है। आप जैसे दिव्य मंगल सुंदर स्वामी कोई नहीं हैं! भक्तिपूर्वक शबर लोग आप की उपासना करते हैं, इसलिए आप एक बार उन्हें दर्शन दीजिए!"

इसके बाद बालक रूपधारी गणेशजी शबरों के पास लौटकर बोले–"तुम लोग अपने स्वामी की मूर्ति के सामने घुटने टेक कर एक स्वर में बोलो–'स्वामी हम लोग आपकी शरण में आये हैं!' तब तुम्हारे स्वामी तुम्हें दर्शन देंगे! जब भी तुम लोग उनको पुकारोगे, तब तब वे तुम्हें जवाब देंगे! तुम लोग फ़सल पैदा करो, घर-द्वार बनाकर गाँव बसा लो! सुखपूर्वक मानवों की तरह जिंदगी बिताओ! तुम्हारे स्वामी की कृपा सदा तुम पर होगी! अब तुम लोग चले जाओ!" यों कहकर बालक गणेश अदृश्य हो गये। शबर लोग अचरज में आ गये। उन्हें प्रणाम करके मूर्ति के

पास पहुँचे। और भक्तिपूर्वक अपने स्वामी को पुकारा। उन्हें प्रणाम किया, इस पर स्वामी ने दिव्य सुंदर रूप के साथ उन्हें दर्शन दिये। मंदहास के साथ अभय मुद्रा में उन्हें आशीर्वाद देकर वे अंतर्धान हुए।

उस दिन से लेकर शबर लोग हर साल मार्गशीर्ष मास में केले के तने को और उसके कोमल पत्तों के साथ स्वामी के लिए मण्डप व पण्डाल बना कर पूजा करने लगे। बलि चढ़ाना बंद करके भक्तिपूर्वक उनकी उपासना करने लगे। इसके बाद वे भी सच्चे नागरिक बनकर शिक्षित हो मानवता के पुजारी बन गये। इसके बाद स्वामीजी जिस पहाड़ पर अवतरित हुए थे उस पर सुंदर शिल्पों के साथ मंदिर बनवाया। संगीत, नृत्य और कविताओं के द्वारा उनकी आराधना करते हुए एक मानव जाति के रूप में प्रसिद्ध हुए जिस पर अन्य लोग भी गर्व कर सके।

शबरों को पता न था कि बालक के रूप में उनके बीच कौन आये हैं! उन लोगों ने सिर्फ़ यही सोचा कि उनका देवता ही उस रूप में आये और उनका अज्ञान दूर करके उन पर अनुग्रह किया है। मगर वे यह नहीं जानते थे कि यह तो विघ्नेश्वर की लीला है! उनका स्वामी सदा यह सोचते हुए विघ्नेश्वर का हृदयपूर्वक स्मरण किया करते थे। अगर विघ्नेश्वर अपने निज रूप का परिचय शबरों को देते तो वे लोग उन्हीं को देवता मानकर उनकी आराधना करेंगे और अपने स्वामी को बिल्कुल भूल जायेंगे! इसलिए विघ्नेश्वर एक अज्ञात बालक के रूप में ही रह गये। वे स्वामी यह भी कुतूहल रखने लगे कि कैलास में जाकर विघ्नेश्वर तथा कुमार के साथ अपना आनंद बांट ले।

इस तरह विघ्नेश्वर शबरों में सुधार लाकर मूषिक वाहन पर आकाश मार्ग में नीचे देखते उत्तर दिशा की ओर यात्रा कर रहे थे, पहाड़ी तलहटियाँ घने पेड़ों से भरी हैं, पर सारी जमीन उन्हें ऊसर व बंजर

दिखाई दी। पानी के होने पर वह जमीन सस्य श्यामल बन जाती, पानी के अभाव को पूरा करनेवाली नदियाँ नहीं हैं, इसलिए सारी पृथ्वी में दरारें पड़ गये हैं! जनता आसमान की ओर ताकते वर्षा पर विश्वास करके अपनी ज़िंदगी घसीट रही है।

साधारण जनता के मुंह से निकले ये शब्द विघ्नेश्वर के कानों में गूंज उठे— "गंगाजी जैसी नदियों के बहनेवाले प्रदेश की जनता कैसी भाग्यवान है! सारी गंगा हमें भले ही प्राप्त न हो, काश! उसकी एक शाखा हमें प्राप्त हो जाती! भगवान हम पर कृपा क्यों नहीं करते? कहा जाता है कि तीन करोड़ देवता हैं, पर किसलिए? हम पर किसी की कृपा नहीं है!"

उधर पश्चिमी दिशा में ऊँची पर्वत-श्रेणियाँ, इधर पूरब की दिशा में छोटी-छोटी पहाड़ियों से शोभित पृथ्वी पूर्वी सागर तक फैली हुई है। असंख्य लोग जानवरों तथा पक्षियों का शिकार करके जंगली जीवन बिता रहे हैं! जो लोग खेती पर निर्भर हैं, वे भी यातनाएं भोग रहे हैं! उन्हें समुद्र पर प्राणों का मोह छोड़कर मछलियाँ पकड़ने वाले मछुए अधिक संख्या में दखिाई दिये।

उत्तर देश की भूमि की तुलना करके विघ्नेश्वर दुखी हुए। हिमालयों की तराइयों में सर्वत्र सुंदर जल-प्रपात, रमणीय सरोवर, तथा नदी-नद से प्रकृति अत्यंत शोभायमान है। इधर पश्चिमी पहाड़ियाँ दीठ के खिलौने जैसे फीकी लग रही हैं!

उस पर्वत श्रेणी के बीच सह्याद्रि के समीप की घाटी में गौतम का आश्रम इस तरह शोभायमान है जैसे कोयलों के बीच मरकत द्युतिमान हो! विघ्नेश्वर ने इस तरह शिर चालन किया, मानो उनके मन में कोई विचार सूझ गया हो! चूहे की गति बढ़ाने की चेतावनी दे वे दक्षिण तथा विन्ध्याचल को पार करके उत्तरी दिशा में पहुँचे। उत्तर की भूमि दूर से कोई नई भूमि जैसी उन्हें प्रतीत हुई। वहाँ पर पहुँचते ही उन्हें वह सब विचित्र-सा लगा।

[९]

जुरेक को उदास देख हसन को हँसी आई। वह समझाने के स्वर में बोला–"तुम जल्दबाजी में मत आओ, तुम्हें दीनारों की थैली मिल जाएगी और तुम्हारा बच्चा भी मिलेगा! पारा के साथ तुम्हारी भानजी जीनाब का रिश्ता क़ायम करके शादी का मुहूर्त निश्चय कर तब जाओ!"

"जीनाब की शादी पारा के साथ करने में मुझे कोई एतराज़ नहीं है। लेकिन जीनाब कोई ऐसी भेड़ नहीं जो कि हाट में खरीदी जाती है। उसके साथ शादी करने वाले को उसकी क़ीमत चुकानी होगी!" जुरेक ने शर्त रखी।

"जरूर चुकाऊंगा। मगर कितनी मात्रा में?" पारा ने बड़ी आतुरता के साथ पूछा।

"अजर की बेटी कमर के पास जो सोने का शिरोभूषण, सोने की करधनी, सोने की चादर और सोने के जूते हैं, उन्हें लाकर देनेवाले के साथ जीनाब शादी करना चाहती है! अगर तुम वे चीज़ें लाकर दे सकोगे तो मुझे यह शादी करने में कोई एतराज नहीं।" जुरेक ने कहा।

"जरूर लाऊँगा।" पारा ने कहा।

इसके बाद जुरेक दीनारों की थैली और अपने बच्चे को लेकर चला गया, तब हसन ने पारा अली से पूछा–"अरे, इस जिम्मेदारी को तुमने अपने सर पर क्यों ले लिया? अजर तो मंत्र-तंत्र जानता है, वह भूत-पिशाचों को अपने क़ाबू में रखता है। वह बगदाद शहर की चहरदीवारी के बाहर सोने व चांदी की ईंटों से बनी इमारत में रहता है। रात के वक़्त जब

वह उस मकान में रहता है, तभी वह दिखाई देता है। दिन भर वह शहर में महाजनी करता है। रात के वक़्त वह अपनी बेटी की सोने की चादर एक सोने के थाल पर रखकर चुनौती देता है कि ईरान, ईराक व अरब का कोई भी डाकू इसे चुरा ले तो मैं भी देखूं!" कई डाकू उस सोने की चादर को हड़पने की कोशिश करके खत्म हो गये हैं। यह काम तुम से बनने का नहीं है!"

"जो बात मेरे मुंह से निकल गई, उस पर मैं टिका रहूंगा! जीनाब को दुलहिन बनाते वक़्त सोने की वह चादर ओढ़ा कर सोने का शिरोभूषण पहना दूंगा, सोने की करधनी और जूते पहना कर तब उसके साथ मैं शादी करूंगा।" पारा बोला।

इसके बाद पारा अजर की दूकान की ओर चल पड़ा। अजर ने सोने के बोरों को तौलवा कर गधे पर लदवाया, अपनी दूकान बंद करके गधे पर सवार हो शहर के बाहर पहुंचा। पारा उसके पीछे हो लिया।

एक स्थान पर पहुंचकर अजर ने थैली में से थोड़ा बालू निकाला और मंत्र फूंक कर हवा में फेंक दिया। तुरंत सामने एक महल प्रत्यक्ष हुआ। वह महल सोने व चांदी की ईंटों से बना था। इसके बाद अजर गधे पर उस महल के अंदर चला गया। थोड़ी देर बाद उसने खिड़की खोली, अपने हाथ में एक सोने का थाल लिया, उस पर सोने की एक चादर रखकर चिल्ला

उठा—"ईराक, ईरान और अरब के नामी डाकुओ, तुम लोगों से बन पड़े तो मेरी बेटी की यह संपत्ति चुराकर उसके साथ शादी कर लो।"

पारा ने सोचा कि अजर के साथ मीठी बातें करके उन चीज़ों को इनाम में प्राप्त करना है। उसने कहा—"हुज़ूर, आप से थोड़ी देर के लिए बात करनी है।"

"ऊपर आ जाओ।" अजर ने कहा।

पारा ऊपर चला गया और अजर से अपनी ज़रूरत अर्ज़ की। अजर ने पारा की सारी बातें सुन लीं, तब ठठाकर हँस पड़ा। इसके बाद उसके हाथ की रेखाओं को परख कर देखा, तब उसे सलाह दी—"अगर तुम्हें अपनी जान प्यारी है तो तुम अपनी यह कोशिश छोड़ दो। किसी ने तुम्हें हानि पहुँचाने के ख्याल से तुमको इस काम के लिए उकसाया है। चूंकि मेरी आयु से तुम्हारी आयु लंबी है, वरना मैं तुमको इसी वक़्त मार डालता।"

ये बातें सुन पारा गुस्से में आया, तलवार खींच कर बोला—"अरे बदमाश, मैंने तुमसे जो चीजें मांगीं, वे न दोगे तो मैं इसी क्षण तुमको मार डालूंगा।"

"तुम जिस हाथ से मुझको मार डालना चाहते हो, वह हाथ बेकार हो जाय!" अजर ने शाप दिया। इस पर दूसरे ही क्षण उसका हाथ सन्न पड़ गया। तब पारा ने अपनी तलवार को बायें हाथ में ले लिया। अजर के मंत्र के असर से वह

हाथ भी इस तरह सन्न रह गया, मानो उसे लकवा मार गया हो।

तब अजर ने मुस्कुराते हुए पूछा–"अब तुम अपनी कोशिश बंद करोगे या नहीं?"

"मुझे वह चादर और वे सारी चीज़ें चाहिए।" पारा दृढ़ स्वर में बोला।

"इसके लिए एक ही उपाय है! तुम गधा बनकर इन चीज़ों को ढोते रह जाओ।" यों कहकर अजर ने मंत्र फूंक कर पारा पर छिड़क दिया। दूसरे ही पल में पारा अली गधा बन गया।

दूसरे दिन अजर पारा अली को दूकान को हांक ले गया। उस दिन शाम को घर लौटने के बाद अजर ने अली को फिर आदमी बनाया, और पूछा–"तुम क्यों नाहक़ बिगड़ना चाहते हो? मेरी सलाह मानकर अपने घर चले जाओ। वरना में तुमको इससे भी बदतर जानवर के रूप में बदल सकता हूँ!" लेकिन अली ने अजर की बातों की परवाह न की। वह अजर पर हमला कर बैठा। तब क्रोध में आकर अजर ने उस पर मंत्र-जल छिड़क कर उसे भालू बनाया।

दूसरे दिन अजर की बेटी कमर ने अपने बाप से पूछा–"बापू, इस युवक से पूछ लो कि क्या वह मेरे साथ शादी करने के लिए तैयार है या नहीं?"

"तुम्हीं पूछ लो।" यह कहते अजर अपने गुस्से को पीकर चला गया। कमर ने पारा अली से पूछा–"सुनो जवान! तुम मेरी चीज़ों को चाहते हो या मुझे?"

"दिलैला की बेटी जीनाब नामक सुंदरी को भेंट करने के लिए तुम्हारी ये चीज़ें मुझे चाहिए।" पारा ने कहा।

"देखती हो न? इसका मन बदलेगा नहीं।" अजर ने अपनी बेटी से बताया। इसके बाद उसने अली पर जल छिड़ककर उसको बन्दर की शकल में बदल दिया।

उस दिन रात को कमर एक निर्णय पर पहुँची। भले ही अली उसके साथ शादी न करे, पर उसके सुख के वास्ते अपनी

सारी चीज़ें उसे सौंपने का निश्चय कर लिया। इसके बाद अपनी सारी चीज़ें एक सोने के थाल में रखकर कमर बन्दर की शक्ल में रहने वाले अली के पास पहुँची, उसे आदमी के रूप में बदल कर बोली–"अली, तुम ये सारी चीज़ें ले लो! तुम जिस जीनाब को दिल से प्यार करते हो, उसके साथ शादी कर लो।"

कमर की बातें सुनने पर अली के मन में उसके प्रति बड़ा आदर का भाव पैदा हुआ। इस पर अली अपने साथ कमर को लेकर हसन और अहमद के पास पहुँचा। उन दोनों ने अली को समझाया–"सुनो, जीनाब के साथ शादी करने के बाद कमर के साथ भी तुम्हें शादी करनी होगी। कमर अपने बाप की इकलौती बेटी है। इसलिए क़ानून के मुताबिक़ कमर के बाप की सारी संपत्ति उसके मरने के बाद तुम्हारी हो जाएगी।"

इसके बाद हसन और अहमद ने दिलैला, जीनाब और जुरेक को अपने घर बुला भेजा। जुरेक को गवाह बनाकर पारा अली ने जीनाब को कमर की सोने की करधनी, चादर, शिरोभूषण और जूते शुल्क के रूप में दिये। इस पर जुरेक ने अपनी भानजी जीनाब की शादी पारा अली के साथ करने को मान लिया।

उन आभूषणों को पाने के लिए अली ने जो बड़ी-बड़ी यातनाएँ झेलीं, वह सारी कहानी सुनने के बाद जीनाब ने अली को कमर के साथ शादी करने के लिए मान लिया। जल्द ही अली और जीनाब की शादी ठाठ से मनाई गई।

थोड़े दिन बाद पारा अली ने खलीफ़ा के दर्शन करके उसे दरबार में कोई नौकरी दिलाने के लिए अर्जी दी। कोत्वाल और सब ने उसका समर्थन किया। इस पर खलीफ़ा ने अली को सिपाहियों के सरदार के रूप में नियुक्त किया। महीने एक हज़ार दीनार तनख्वाह पाते हुए पारा अली ने जीनाब और कमर के साथ अपनी ज़िंदगी बड़े आराम से बिताई। (समाप्त)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ दिसम्बर १९८१ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

Brahm Dev

★

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों ।

★ अक्तूबर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा ।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा ।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अगस्त के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **रोना कैसा यार !**

द्वितीय फोटो : **मिले जो माँ का प्यार !!**

प्रेषिका : **इंदिरा महेश्वरी,** ७६, रानीमंडी, इलाहाबाद-२११००३

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी ।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

शेर-ए-मैसूर

एक बड़ी ताक़त जिससे अंग्रेज़ों को टकराना था वह मैसूर का टीपू सुल्तान था।

इसलिए उन्होंने टीपू से लड़ने के लिए जंगी फ़ौज इकट्ठी की।

क्या अंग्रेज़ टीपू को हरा सके? इसे जानने के लिए पढ़िए अमर चित्र कथा।

आपके अपने बुकस्टोर में। २३० से अधिक कथाएं।
और हर १५ दिन में एक नई कथा।
२४ अंकों के लिए सदस्यताशुल्क की दर रु. ६५/ नियमित मूल्य रु. ७२/
सदस्यताशुल्क इण्डिया बुक हाउस मैगज़ीन कम्पनी,
२४९ डी. एन. रोड, बम्बई ४००००१, में स्वीकृत किया जाता है

टीपू सुल्तान

अमर चित्र कथा

वितरकः इण्डिया बुक हाउस

अमर चित्र कथा
आपकी संस्कृति का दर्पण

OBM/7060-HN

OBM/7075.HN

प्रवेशपत्र
कॅडबरी की
'जॅम जैसी कविता'
प्रतियोगिता
Cadbury's
GEMS
MILK CHOCOLATE
यह पृष्ठ काटो, अपना
नाम, उम्र और पता यहां भरो
और इसे कॅडबरिज़ इण्डिया लि.,
पो. आ. बाक्स नं. २६५१५,
बम्बई ४०० ०२६ के पते पर भेज दो.
नाम
उम्र
पता
इस जगह में अपनी कविता साफ़ साफ़ लिखो:
यह पृष्ठ काटो
OBM/7075 HN
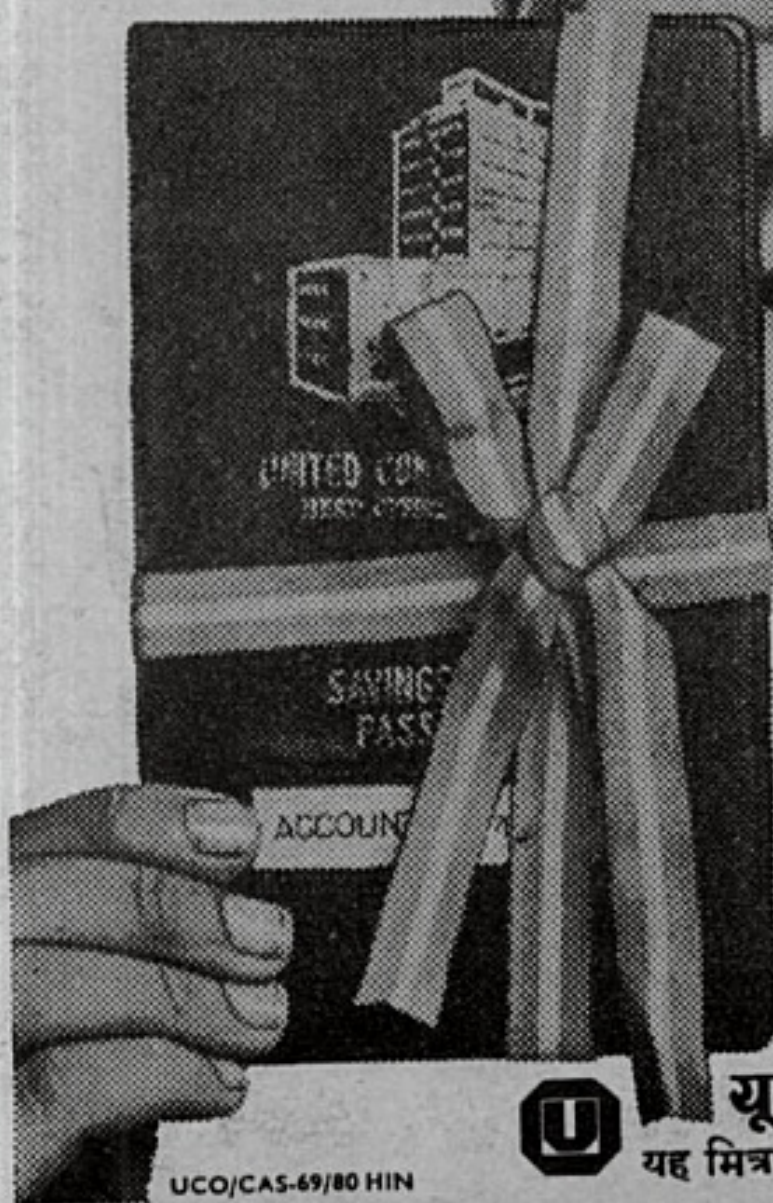
अप्सरा और नटराज पेंसिलें
रंगबिरंगी डिज़ाइनों में
इनसे लिखना इन्द्रधनुष से लिखना

अप्सरा व नटराज

पेंसिल: लंबी उम्र, मज़बूत दिल.

हिन्दुस्तान पेंसिल्स प्राइवेट लिमिटेड, ७९ पल्टन रोड, बम्बई ४०० ००१

OBM 4714 HN

CHANDAMAMA (Hindi) OCTOBER 1981 Regd. No. M. 5452